॥ वृत्तालये स भगवान् जयतीह साक्षात् ॥

अपना
वडतालधाम

वड़तालधाम द्विशताब्दी ग्रंथ माला-५

लेखक : सद्गुरु ब्रह्मस्वरुपदास स्वामी
(साहित्य-विशारद)

प्रसिद्ध कर्ता
श्री स्वामिनारायण मंदिर, वडतालधाम

आराध्य ईष्टदेव श्री हरिकृष्ण महाराज - वडतालधाम

प.पू.ध.धु. १००८ आचार्य
श्री राकेशप्रसादजी महाराज

॥ वृत्तालये स भगवान् जयतीह साक्षात् ॥

अपना वडतालधाम

वड़तालधाम द्विशताब्दी ग्रंथ माला-५

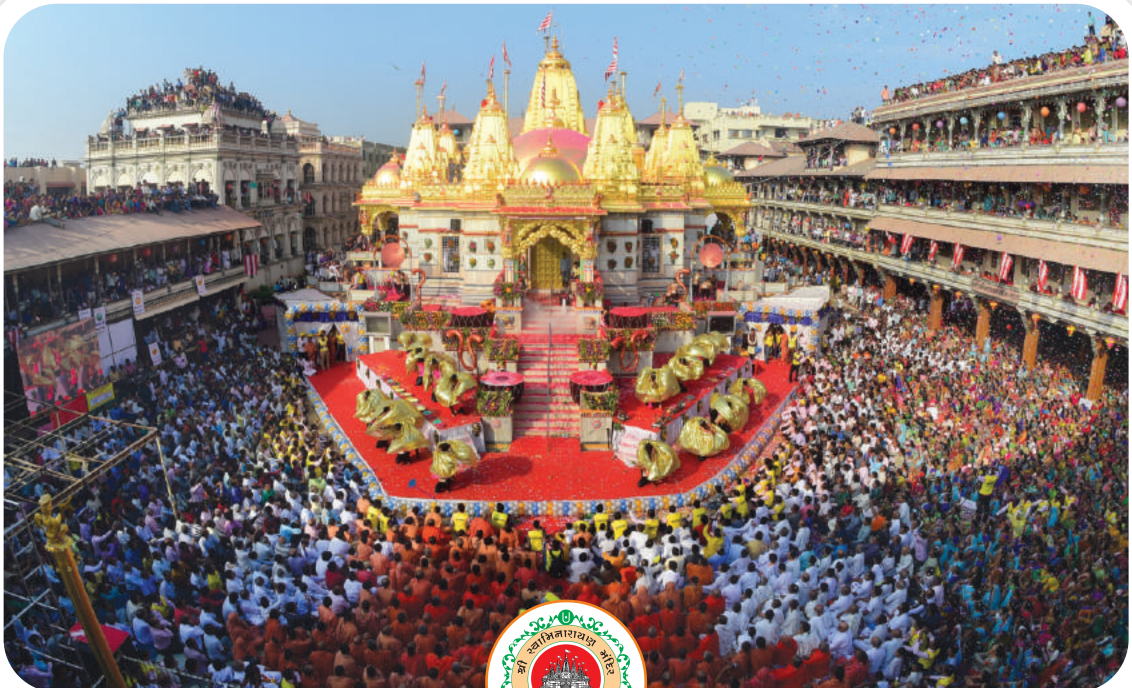

: लेखक :

सद्‌गुरु ब्रह्मस्वरुपदास स्वामी (साहित्य विशारद) - वडतालधाम

: संपादक एवं अनुवादक :

स्वामी श्यामवल्लभदासजी, वडतालधाम

साधु अमृतवल्लभदास, वडतालधाम

: प्रकाशक :

मुख्य कोठारीश्री डॉ. शास्त्री संतवल्लभदास (Ph.D., D.Litt)

श्रीस्वामिनारायण मंदिर, वडतालधाम-सस्थान

अपना वडतालधाम

वड़तालधाम द्विशताब्दी ग्रंथ माला-५

लेखक : सद्‌गुरु ब्रह्मस्वरुपदास स्वामी (साहित्य विशारद)

संपादक एवं अनुवादक : स्वामी श्यामवल्लभदासजी, वडतालधाम
साधु अमृतवल्लभदास, वडतालधाम

प्रकाशक : श्री स्वामिनारायण मंदिर – वडताल
मु.वडताल, ता. नडियाद, जी. खेडा. पीन : ३८७३७५ (गुजरात)
फोन : (०२६८) २५८९७२८, २५८९७७६.

प्रकाशन तिथि: सं.२०७९, महाराजश्री विंशती वंदना महोत्सव जनवरी – २०२३

E-mail : vadtaldhamvikas@gmail.com
Web : www.vadtalmandir.org

आवृत्ति : प्रथम (ई.स. २०२३)

प्रत : ₹ ३०००

किंमत : ₹ १००/-

प्राप्तिस्थान : श्री स्वामिनारायण मंदिर – वडतालधाम, श्री हरिकृष्ण धार्मिक स्टोर

मुद्रक : श्रीजी आर्ट, अमदावाद
फोन. (०७९) २६४४१५२२ (मो.) ७६०००२६६८६, ९८७९६०६६८६
E-mail : shreejiart@gmail.com, Web : www.shreejiarts.org

॥ श्री स्वामिनारायणो विजयतेतराम् ॥

सनातन धर्मधुरंधर आचार्य श्री १००८ श्री राकेशप्रसादजी महाराजश्री
श्री लक्ष्मीनारायण देव दक्षिण देश गादी
संस्थान : वडताल – पीन : ३८७ ३७५

आचार्य जा. र. नं. ५५/२०७५

ता. ०७-१० -२०१८

આશીર્વાદપત્ર

વડતાલવાસી શ્રી લક્ષ્મીનારાયણદેવ તથા આરાધ્ય ઈષ્ટદેવ શ્રીહરિકૃષ્ણમહારાજના ચરણકમળથી લિ.વડતાલવાસી શ્રીલક્ષ્મીનારાયણદેવ ગાદીના પીઠાધિપતિ **પ.પૂ.ધ.ધુ.૧૦૦૮ આચાર્યશ્રી રાકેશપ્રસાદજી મહારાજશ્રી**ના શુભાશીર્વાદપૂર્વક જય શ્રી સ્વામિનારાયણ વાંચશો.

સદ્.સ્વા.શ્રી બ્રહ્મસ્વરૂપદાસજી (સાહિત્ય વિશારદ) વડતાલધામ દ્વારા સંશોધિત અને સ્વા.શ્રી શ્યામવલ્લભદાસજી દ્વારા સંપાદિત **"આપણું વડતાલધામ"** નામક પુસ્તક જ્યારે વચનામૃત દ્વિશતાબ્દી મહામોહત્સવ અંતર્ગત પ્રકાશીત થવા જઈ રહ્યું છે. તેનો અમો આનંદ વ્યક્ત કરીએ છીએ.

વૃતપુર મહિમા કહ્યો ન જાય, કદિ મુખ શેષ સહસ્ત્ર કલ્પ ગાય ।
વૃષસુત તણી મુખ્ય ગાદી જ્યા છે, ત્રિભુવન તત્વ અનેક તીર્થ ત્યા છે ॥

આવો અગાધ મહિમા જે ધામનો છે એવા વડતાલધામના મહિમાનું આચમન કરવાનો પુણ્ય અવસર આ પુસ્તકના માધ્યમે સહુને મળશે. દર્શનાર્થે આવતા યાત્રાળુઓ જ્યારે મહિમા જાણીને દર્શન કરશે; ત્યારે તેના મનમાં વિશેષ આનંદ થશે. પ્રસ્તુત પુસ્તકનાં વાંચન મનન તથા વડતાલધામનાં દર્શનથી ભક્તોને ભક્તિ,ઉપાસના, મહિમા પુષ્ટી થનાર છે. આપ દ્વારા પૂર્વે ઘણા મનનીય પુસ્તકોનું લેખન-સંશોધન થયું છે. અમોને શ્રધ્ધા છે કે, પ્રસ્તુત પુસ્તક દ્વારા ભક્તોનાં હૃદયમાં વડતાલધામનો મહિમા વિશેષ દ્રઢ થશે. આ પુસ્તક પ્રકાશનમાં સહયોગ આપનાર તમામ ભક્તોનું વડતાલ વિહારી શ્રી હરિકૃષ્ણ મહારાજ મંગલ વિસ્તારે તેવી તેમનાં ચરણ કમળમાં પ્રાર્થના સહ જય શ્રી સ્વામિનારાયણ

आचार्य महाराज श्री

प्रकाशकीयम्....

आज के इस शोर भरे वातावरण में कोई अगर ''वड़तालधाम''शब्द सुनता है तो उसके कान में अमृत बिंदु जैसा लगता है; इतना आनंद इसलिए क्यूँकि यहाँ कारण के कारण, ईश्वरों के ईश्वर परब्रह्म परमात्मा भगवान् श्री स्वामिनारायण; ''श्रीहरिकृष्ण महाराज'' स्वरुप में साक्षात् विराजमान है। तभी तो धरती का अक्षरधाम वड़ताल गाँव है। इस अक्षरभूमि के कण कण में सहजानंद और पांचसो परमहंसो की पदरज के स्पंदन गूंज रहें है। इस दिव्य गुंजन का रणकार महिमाभरी आँखों में मूर्तिमंत होकर नदी में तैरते पुष्प जैसा था, है और रहेगा।

यह स्वामिनारायण सम्प्रदाय का सर्वोच्च तीर्थस्थान है।

यह लाखों आत्माओं की आस्था का केन्द्र है।

यह हमारी उपासना का प्रमुख और अनोखा केन्द्र है।

श्रीहरिकृष्ण महाराज यहीं साक्षात् विराजमान है।

यह हमारा आज्ञा केन्द्र भी है क्यूंकि शिक्षापत्री यही लिखी गई है।

यहाँ सदेह रहने से विदेह मुक्त जैसा सुख मिलता है, यहाँ तन-मन-धन से सेवा करने का अवसर उसीको प्राप्त होता है जिस पर भगवान् श्रीहरि कृपा कलश उंड़ेलते है।

वड़ताल की सरल और सचोट महिमासभर जानकारी की पुस्तिका की आवश्यकता बार बार महसूस होती थी। छोटे बड़े यात्रा संघ वड़ताल के बारे में जिज्ञासा दर्शाते तब इसका विचारपुनः होता, एक दिन अचानक पूज्य ब्रह्मस्वरूप स्वामी को याद आया और तुरंत पूज्य श्याम स्वामीने प्रसंगो को इकठ्ठा कर यह पुस्तक तैयार करने की विनंती की। पूज्यश्री ने यह सेवा सहर्ष स्वीकारी और अल्प समय में ही महत् साहित्य के सार रूप ''अपना वड़तालधाम'' नामक पुस्तक लिख कर तैयार की है। हमारे सत्संग के इतिहास में अभूतपूर्व प्रसंग ''वचनामृत द्विशताब्दी महोत्सव - २०७६'' के प्रसंग पर इसका गुजराती संस्करण प्रकाशित किया गया था। वड़ताल संस्थान द्वारा साहित्य सेवा के भागरूप अनेकविध प्रकाशन हो रहे है, जिसका आनंद तो है हि परंतु

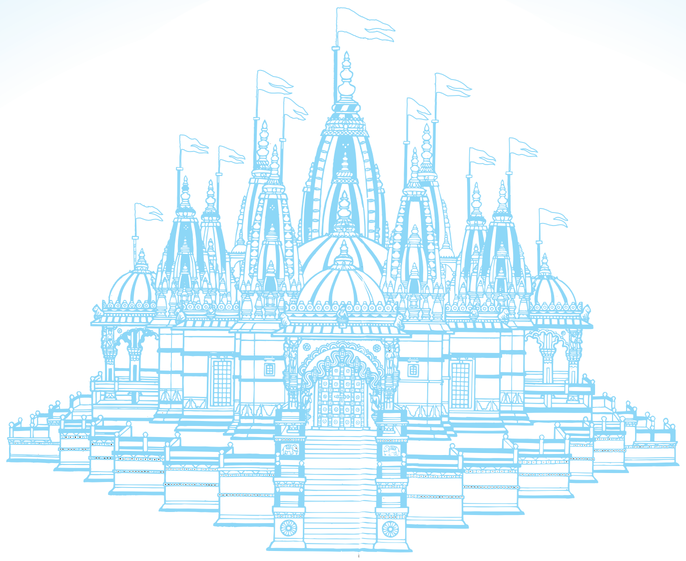

विशेष आनंद इस बात का है की भगवान श्रीस्वामिनारायण द्वारा वड़ताल में स्वहस्त प्रस्थापित उपास्य स्वरूप श्रीहरिकृष्ण महाराज तथा महाप्रतापी श्रीलक्ष्मीनारायण आदिक देवो की प्रतिष्ठा के आगामी २०० वे वर्षगांठ उत्सव के भागरूप साहित्य की एक श्रृंखला प्रकाशित होगी, जिसका यह ''अपना वड़तालधाम'' पञ्चम पुष्प है। तथा ''वड़तालधाम द्विशताब्दी ग्रंथमाला'' का आरंभ वड़ताल गादि के यशस्वी आचार्य महाराजश्री प.पू.ध.धु. १००८ आचार्यश्री राकेशप्रसादजी महाराजश्री गादि पदारूढ के २०वे वर्ष पूर्ण होने पर ''विंशती वंदना'' प्रसंग पर यह पुस्तक प्रकाशित हुआ है। इस ग्रन्थ के लेखन कार्य से लेखक की कलम धन्य बन गई है। इस राष्ट्रभाषा में अनुवाद कार्य साहित्यप्रेमी शास्त्री अमृतवल्लभदासजीने किया है। संपादन का श्रेय श्यामवल्लभदासजी स्वामी को मिलता है। एवं इस अनुवाद कार्य में भाषा शुद्धिकरण में श्री पंकजभाई शाह (इंदौर) का बड़ा योगदान प्राप्त हुआ है। वर्तमान समय में शांति की और कदम रखनेवाले हर सज्जन के लिए यह पुस्तिका ''माइलस्टोन'' बनेगी। इस ग्रन्थ को पढ़कर आपके हृदय में वड़तालधाम के प्रति सद्भाव बढे; प्रकाशन भी सार्थक हो इसी आशा के साथ इस कार्य में सहयोगी पूज्य श्याम स्वामी, पूज्य अमृत स्वामी, निकित वगेरे पर श्री हरिकृष्ण महाराज एवं श्री लक्ष्मीनारायणदेव तथा प.पू.ध.धू. १००८ आचार्य श्री राकेशप्रसादजी महाराज इत्यादि

प.पू.को.देवप्रकाशदासजी स्वामी
चैयरमेन वड़तालधाम मंदिर

डॉ. संतवल्लभदासजी स्वामी (PH.D., D.LITT)
मुख्य कोठारी वड़तालधाम मंदिर

जयति जयति धन्यं ग्राम वृत्तालयाख्यं
जयति जयति धन्यं धाम वृत्तालयाख्यं
जयति जयति धन्यं तत्स्थितं देव वृन्दं
जयति जयति धन्यं तत्स्थितं साधु वृन्दं

लेखक की कलम से...

प्यारे संतो भक्तों ! योगीवर्य गोपालानंद स्वामी 'अर्चावतार स्तोत्र' में वड़ताल का महिमा बताते हैं कि ''वड़ताल गांव धन्य हैं, वड़ताल धाम धन्य है, वड़ताल धाम के सभी देव वृन्द धन्य है और वड़ताल धाम में रहने वाले समस्त संतवृंद भी धन्य है। इनका जयजयकार हो, जयजयकार हो।

हे भक्तों ! अगर कोई प्रयागराज में जाकर एक वर्ष मंत्रजाप, तपस्या, व्रत करे और एक वर्ष त्रिवेणी में स्नान करे तब उसे जो पुण्यफल मिलता है वही फल केवल एकबार वड़ताल के प्रसादी के स्थानों के महिमा सहित दर्शन करने वाले को मिलता है। क्यूंकि यह प्रगट भूमि प्रगट प्रभु के पावन चरणों से पवित्र है। प्रगट प्रभु के स्पर्श और दृष्टि से प्रसादी रूप हो गई है।

हे भक्तों ! वड़ताल धाम यानी पृथ्वी का अक्षरधाम; क्यंकि यहाँ सर्वावतारी श्रीहरिकृष्ण महाराज प्रत्यक्ष दर्शन दे रहें है। वडताल यानी वैकुण्ठधाम क्यंकि यहाँ श्रीलक्ष्मीनारायण देव साक्षात् दर्शन दे रहें है और वड़तालधाम यानी गोलोकधाम क्यूंकि द्वारका से श्री रणछोड़राय तीर्थो सहित यहाँ पधारे हैं।

हे भक्तों ! ऐसे ट्रिल धाम के एक ही स्थान पर दर्शन पुरे ब्रह्माण्ड में कही नहीं मिलेंगे। इसलिए ऐसा महिमा समझ वडतालधाम में अवश्य भजन, भक्ति, दर्शन, सेवा, दान और अनुष्ठान कर मोक्ष का जतन करने आना चाहिए।

हे भक्तों ! यह पुस्तक लिखने की प्रेरणा, वड़ताल संस्था के सक्रीय कार्यकर्ता और मेरे गुरुबंधुने की। इस पुस्तक का नामाभिधान ''अपना वड़तालधाम'' वड़ताल मंदिर के आसिस्टन्ट कोठारी और मेरे गुरुभाई डो. शास्त्री संतवल्लभदास स्वामी (PH.D., D.LITT) ने किया है और पुस्तक की फाइनल प्रूफ-वांचन की सेवा मेरे गुरुबंधु शा. अमृतवल्लभदासजीने की है। इन तीनो गुरुभाईओं को श्री हरिकृष्ण महाराज अपनी मूर्ति का विशेष सुख प्रदान करें ऐसी मेरे प्रार्थना है।

हे भक्तों ! अंतमें इतना लिखना चाहूंगा कि यह पुस्तक ''अपना वड़तालधाम'' लिखने से वड़तालवासी श्री हरिकृष्ण महाराज, श्रीलक्ष्मीनारायण देव, परम पूज्य आचार्य श्री राकेशप्रसादजी महाराज, वड़ताल मंदिर के मुख्य कोठारी और मेरे गुरु परम पूज्य सद्गुरु शास्त्री घनश्यामप्रकाशदासजी स्वामी, वड़ताल मंदिर के चैयरमेन परम पूज्य देवप्रकाशदासजी स्वामी एवं सभी संत-भक्त मुझ पर प्रसन्न हो और शुभाशीष प्रदान करे ऐसे अभ्यर्थना.

लि. स्वामी ब्रह्मस्वरूपदास के
अति हेतपूर्वक जय श्री स्वामिनारायण

ता. १५-८-२०१९
श्रावण शुक्ल पूर्णिमा
वड़तालधाम

परम पूज्य धर्मधुरंधर १००८ आचार्य श्री राकेशप्रसादजी महाराजश्री
एक परिचय

- आपश्री को गादी पर विराजमान हुए २० साल पूरे हो रहा हैं इस अवसर पर समग्र सत्संग समाज के समक्ष आपके २० वर्ष के स्वर्ण काल का परिचय करवाते हुए हम अनुग्रहित है।
- आपश्री सत्संग महासभा के प्रयास और सद्गुरु श्री गोपालानंद स्वामी और श्री कष्टभंजन देव के आशीष के साथ ३१-०१-२००३ (संवत-२०५९, पौष वद-१४) को वड़तालवासी श्रीलक्ष्मीनारायण देव की गादी पर विराजमान हुए।
- आपश्री ने दीक्षा और प्रतिष्ठा द्वारा इस महान सत्संग का पोषण किया है। वर्ष २००३ से २०२२ के कार्तिक मास तक आपने ८२० संतो को दीक्षित कर सत्संग को महान योगदान दिया है। जो मूल संप्रदाय के लिए गौरव लेने वाली बात है, आपके स्नेही और वात्सल्य भाव के कारण १२६१ अधिक संत, ६०८ अधिक पार्षद और १९ ब्रह्मचारी सदैव आपकी अनुवृत्ति में रहते हैं।
- आपने हरिमंदिर और शिखरबंद ४९७ मंदिरों की प्राण प्रतिष्ठा की है। इसमें नए मंदिरों और पुनर्निर्मित मंदिरों में प्रतिष्ठा की पुनः प्रतिष्ठा शामिल है।
- आप लगातार सत्संग के उत्कर्ष के लिए विचारशील रहते है। कथा-पारायण, शाकोत्सव, पाटोत्सव, शिलान्यास, उद्घाटन, रंगोत्सव आदि ११,५४३ बड़े प्रसंगों को आपने शोभायमान किया है। इसके अतिरिक्त असंख्य छोटे बड़े प्रसंगों को आपने सुशोभित किया हैं।
- आपने लगभग ६९,८७७ श्रद्धालु भक्तो के घर घर जाकर उनके घरो को पावन किया है। तदुपरांत सत्संग की व्यस्तता में भी आप विदेशों में बसे भक्तों को भूले नहीं हैं और भक्तो के सुखार्थ यूके की ७, कनाडा की ४, अफ्रीका की ३ (केन्या, युगांडा, तंजानिया), ओस्ट्रेलिया की ४, दुबई की ३ (७ देश), बहरीन की १, अमेरिका की २९ सत्संग यात्राएं की हैं।
- आपके आशिर्वाद से अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, यूके और आफ्रिका में सत्संग मण्डली और संतों के द्वारा अनेक मंदिरों का निर्माण हुआ हैं।
- आपके २७५८ से अधिक शहरों और गांवों में सत्संग विचरण, ८ संत शिविरों, ६३ बाल-युवा एवं प्रौढ़ भक्त शिविरों में आशीर्वाद और मार्गदर्शन कर एक भद्र समाज का निर्माण किया है।
- सत्संग के अप्रतिम बड़े बड़े उत्सवों और आयोजनों जैसे भव्य श्री हरिकृष्ण महाराज १,२,३ श्री रघुवीरजी महाराज, घोलेराधाम, सारंगपुरधाम, जूनागढधाम, गढपुरधाम, नीलकंठधाम, सुवर्ण शिखर, स्वर्ण मंदिर का उद्घाटन, रुस्तमबाग मूर्ति महोत्सव, वचनामृत द्विशताब्दी महामहोत्सव, सरधार मूर्तिप्रतिष्ठा महोत्सव, अहमदाबाद गादी पदारूढ षष्ठीपूर्ति की शोभा को बढ़ाया है। सेवा करने वालो को प्रेम और सराहना देकर प्रोत्साहित किया जाता है। साथ ही अनेक धर्माचार्यो एवं सामाजिक, राजनीतिक, युवा गणमान्य व्यक्तियों से शिष्टाचार भेट कर आपसी संवाद और समन्वय स्थापित किया है। आपके आदेशानुसार गादी वाले मातृश्रीने २४६ त्यागी बहनों को दीक्षा दी है और वर्तमान में मातृश्री की अनुवृत्ति में ४२७ से अधिक संख्या में सांख्य योगिनी माताएँ हैं।
- पूज्य मातृश्री ने सूरत में ३, मालसर में १, द्रोणेश्वर में १ और चारधाम, वड़ताल, नैमिषारण्य में शिविर और सारंगपुर, दुबई आदि सैकड़ों ग्राम सभाओं में सत्संग शिविर, कथापारायण, महामहोत्सव एवं अनेक गांवो की सत्संग सभा में उपस्थित रहकर आशीर्वाद प्रदान कीए है, जिससे सत्संग का संवर्धन और विकास हुआ है।
- आपके इस गादी काल की स्वर्णिम उपलब्धियों के लिए हम आपको कोटि कोटि वंदन कर हार्दिक बधाई प्रेषित करते है।

साहित्य प्रकाशन समिति की ओर से साधु शुकदेवप्रसाददास के
जय श्री स्वामिनारायण।

अनुक्रमणिका

(१) वडतालधाम यानी ? १३
(२) वडताल मंदिर अर्थात् ... १५
(३) तीर्थराज वडतालधाम १६
(४) प्रसादीभूत स्थान की महिमा १७
(५) वडतालधाम की विशेषताएँ १८
(६) श्री लक्ष्मीजी का साधना स्थल १९
(७) वर्णिवेश में वडताल में - घेला हनुमान २१
(८) बद्रीकाश्रम के मुनि वडताल में २२
(९) बापुभाई के घर श्रीजी पधारे २३
(१०) भक्तराज वासण सुथार २४
(११) आदर्श भक्त जोबनपगी २५
(१२) हवेली पर बैठे महाराज २६
(१३) बामरोली की खिरनी २८
(१४) खिरनी पर अनेक बार झूले २९
(१५) बामरोली की कोठी का इतिहास ३०
(१६) प्रसादी की वडेउ माता ३२
(१७) सोनार कूई ३४
(१८) गोपी तालाब ३५
(१९) ताडण तालाब ३६
(२०) धना तालाब - चंदन तलावडी (छोटा तालाब) ३७
(२१) गंगाजलिया कुआँ ३८
(२२) ज्ञान कूप ३९
(२३) सुंदर पगी का कुआँ ४०
(२४) प्रसादी के खोडियार माताजी ४२
(२५) ज्ञानबाग - बैठक ४३

(२६) द्वादश द्वार के झुलेपर झुले ४४
(२७) ज्ञानबाग में भव्य रंगोत्सव ४५
(२८) वडताल मंदिर खातमुहूर्त ४७
(२९) सद्गुरु श्री ब्रह्मानन्द स्वामी का आगमन ४८
(३०) श्रीहरिजी ३७ ईंटे शीर पर लाये ४९
(३१) श्री लक्ष्मीनारायणदेव की मूर्तिया ले आये ५०
(३२) प्रभुजी ने पुतलो को नचाया ५२
(३३) श्री नारायण के आयुध सही हुए ! ५४
(३४) अठारह मूर्तिओ की प्रतिष्ठा ५५
(३५) श्रीहरिजी ने ग्यारह रूप धारण किए !!! ५६
(३६) श्री वासुदेव और श्री हरिकृष्ण की एकता ५७
(३७) श्री हरिकृष्ण महाराज प्रत्यक्ष है ५९
(३८) श्रीहरिकृष्ण महाराज बोले कि ... ६१
(३९) प्रासादिक देव महिमा ६२
(४०) श्री लक्ष्मीजीने स्वयं ब्रह्मचारी को खडा किया। ६३
(४१) सूर्यनारायण वडताल पधारे। ६४
(४२) द्वारकाधीश वडताल पधारे ६५
(४३) "गोमतीजी का वडताल आगमन" ६६
(४४) श्रीहरि कथित - गोमतीजी का माहात्म्य ६७
(४५) "तप्तमुद्रा महिमा" ६८
(४६) "प्रासादिक श्री हनुमानजी - श्री गणपतिजी" ६९
(४७) "श्रीनारायण महोल" ७०
(४८) श्रीहरिमंडप ७१
(४९) शिक्षापत्री लेखन ७२
(५०) वडताल के बीस वचनामृत ७३
(५१) आचार्य स्थापना ७४
(५२) संतो की धर्मशाला ७५

(५३) श्रीअक्षरभुवन ७६
(५४) श्री रणछोडरायजी की प्रतिष्ठा ७८
(५५) प्रासादिक नीम का वृक्ष ७९
(५६) प्रासादिक बुरज ८०
(५७) प्रदक्षिणा का स्मारक ८१
(५८) प्रसादिक गद्दीवाला मंडप ८२
(५९) विशाल सभामंडप ८३
(६०) प्रसादिक नारायण बाग एवं कूप ८४
(६१) शमी पूजन ८५
(६२) गोमतीजी के मध्यमें (छत्री) स्मारक ८६
(६३) गोमतीजी के तट के वचनामृत ८७
(६४) केदारेश्वर महादेवजी ८८
(६५) गोमतजी के दक्षिणतट पर छत्र (स्मारक) ८९
(६६) गोमतीजी के तट पर ओटा ९०
(६७) रघुबीर बाग (वाडी) ९१
(६८) बंदरो के हाथ मे माला ९२
(६९) प्रसादी की ब्राह्मी वनस्पति ९३
(७०) आचार्यश्री स्मृति मंदिर ९३
(७१) उपसंहार ९४
संदर्भसूचि

॥ वृत्तालये स भगवान् जयतीह साक्षात् ॥

"सर्वावतार धर्तारं भुक्ति मुक्ति प्रदायकम् ।
वंदेऽहं स्वेष्टदेवं तं हरिकृष्णं मनोहरम् ॥"

"पूर्व भूमिका"

प्यारे संत-भक्त! अठारहवीं शताब्दी यानी अंधश्रद्धा और भीषण अराजकता का काल। 'जिसकी लाठी उसकी भेंस', जैसी परिस्थिति थी। चोरी, लूटमार, अनीति और अत्याचारों की आग से पूरे भारत वर्ष की प्रजा त्रस्त थी। देश के अधिकतर राजा रक्षक की जगह भक्षक बन चुके थे। प्रजा का पुत्रवत् पालन-पोषण करने की जगह वे कर्तव्य भ्रष्ट होकर शोषण कर रहे थे। देश की अधिकतर प्रजा अन्धविश्वास और सामाजिक कुरीतिओं में फंसी हुई थी। आसुरीवृत्तिवाले भेखधारीओ एवं आक्रान्ताओं के जुल्म और यातनाओं से सज्जन और संतजन पीडित थे।

प्यारे भक्तो ! ऐसे अत्यन्त विकट समय में, अज्ञानरूप अंधकार में डूबी हुई, व्यथित मानवजाती के उत्थान और उद्धार करने के लिए अनंतकोटि ब्रह्मांडो के महानायक - अधिपति पूर्णपुरुषोत्तम सर्वोपरी - सर्वावतारी आदिनारायण भगवान इस वसुंधरा पर प्रकट होकर 'भगवान श्री स्वामिनारायण' नाम से विख्यात हुए।

"जे हरि अक्षरब्रह्म आधार, के पार कोई नव लहे रे लोल ।
जेने शेष सहस्त्र मुख गाय, निगम नेती कहे रे लोल ॥"
- प्रेमानन्द स्वामी

हे भक्तो ! इस अवनी पर परमात्मा के अवतार धारण करने का मुख्य प्रयोजन है 'अपने प्रेमी भक्तों की मनोकामना पूर्ण करके, उन्हे लाड लडाना तथा अनंत मुमुक्षुओं पर अकारण करुणा करके, अपने स्वरूप का निश्चय कराना और इस जीवन के बाद में जीवात्मा को अक्षरधाम में ले जा कर, अपनी मूर्ति के सुख से सुखी करना।

हे भक्तों ! भगवान श्री स्वामिनारायण गढपुर प्रथम प्रकरण के ७८ वें वचनामृत में स्वयं कहते है कि, अक्षरातीत और मन, वाणी की पहुँच से अगोचर परमात्मा ने जब संकल्प किया कि मृत्युलोक के ज्ञानी, अज्ञानी सभी मनुष्यों को मेरे दर्शन हो तब उन्होंने अपरम्पार कृपा कर मनुष्य रूप धारण करने का निश्चय किया जिससे सभी को उनके दर्शन हो सकें। यह असीम (अकारण) करुणा ही इस ब्रह्मांड मे परब्रह्म के प्राकट्य का निमित्त हुई। तभी तो वैराग्यमूर्ति सद्गुरु श्री निष्कुलानन्द स्वामी श्रीहरिजी की अपार करुणा की स्मृति कराते हुए लिखते है कि,

"आप इच्छाए आविया, करवा कोटिकोटिनां कल्याण ।
दया दिलमां आणी दयाळे, तेनां शुं हुं करुं वखाण ॥
लेरी आव्या आज ले'रमां, मे'र करी मेरबान ।
अनेक जीव आश्रितोने, आपवा अभयदान ॥"

– भक्तिनिधि करवुं – १

हे भक्तों ! इस कलियुग के अनेक जीवात्माओं पर अपार करुणा करके परब्रह्म श्रीहरिजी महाराज उत्तर प्रदेश में गोंडा जिले के 'छपिया' गांव में वि.सं. १८३७ चैत्र शुक्ल नवमी ता.२-४-१७८१ की रात्री को दस घडी व्यतीत हो जाने के बाद (१०/१० बजे) प्रगट हुए।

हे भक्तों ! छपिया गांव में तीन वर्ष तक बाललीला करके अपने पिता धर्मदेव और माता भक्तिदेवी के साथ अयोध्या मे आए। वहां ११ वर्ष, ३ मास, और १ दिन की आयु तक ठहरे, बाद में तपस्या के निमित्त से, तीर्थो को विशेषरूप से तीर्थत्व प्रदान करने और अनेक मुमुक्षुओ को दर्शन देने अयोध्या नगरी का परित्याग करके वन मे चल पडे।

हे भक्तों श्रीहरि ने ७ वर्ष, १ मास, और ११ दिन तक वन-विचरण और तीर्थाटन करके लोएज (लोजपुर) में आकर अ.मु.सद्.श्री मुक्तानन्द स्वामी के चरणों मे अपनी आत्यन्तिक कल्याणयात्रा पूर्ण करी। वहां उद्धवावतार सद्गुरु श्री रामानन्द स्वामी को अपना गुरु स्वीकार कर; पीपलाणा गांव में गुरु से भागवती दीक्षा प्राप्त की। तदुपरांत जेतपुर में श्री रामानन्द स्वामी ने उन्हें उद्धव संप्रदाय का आचार्य पद देकर अपनी गद्दी पर विराजित किया।

हे भक्तों ! जेतपुर से प्रगट प्रभु फरेणी गांव आये। वहां गुरुदेव श्री रामानन्द स्वामी ने मनुष्यलीला समाप्त की और धाम में पधारे। गुरुदेव की चतुर्दशी के दिन वि.सं. १८५८ मार्गशीर्ष कृष्णपक्ष की एकादशी ता.३१/१२/१८०१ के पवित्र दिन सार्वजनिक सभा को संबोधित करते हुए अपने 'स्वामिनारायण' नाम की उद्घोषणा की एवं इसी नाम (मंत्र) का जाप करने की अपने अनुयायीओं को आज्ञा दी। तत्पश्चात् उद्धव संप्रदाय, स्वामिनारायण संप्रदाय के नाम से जगविख्यात हुआ।

हे भक्तों ! उद्धव संप्रदाय के आचार्य होने के पश्चात् सोंरठ, काठियावाड, कानम, झालावाड इत्यादि प्रदेशों मे विचरण करते करते प्रगट परब्रह्म चरोतर प्रदेश में स्थित वडताल गांव को "वडतालधाम" में परिवर्तित करने हेतु पधारे।

(१) वडतालधाम यानी ?

वडतालधाम यानी पृथ्वी पर अक्षरधाम।
वडतालधाम यानी स्वामिनारायण संप्रदाय की राजधानी।
वडतालधाम यानी प्रगट परब्रह्म के पावन चरणारविंद से पवित्र हुई भूमि।
वडतालधाम यानी श्रीहरिकृष्ण महाराज के सदैव रहने का निवास स्थान।
वडतालधाम यानी शिक्षापत्री शास्त्र का प्रागट्य स्थान।
वडतालधाम यानी आज्ञा और उपासना का मुख्य केन्द्र।

શ્રી હરિકૃષ્ણ મહારાજ - વડતાલધામ

वडतालधाम यानी श्री स्वामिनारायण भगवान का प्यारा धाम।
वडतालधाम यानी अ.मू.यो.सद्.श्री गोपालानन्द स्वामी का प्रिय धाम।
वडतालधाम यानी श्री महालक्ष्मी देवी की तपःस्थली।
वडतालधाम यानी श्री द्वारकाधीश भगवान का स्वयं द्वारका से आकर सदैव निवास करने का धाम।
वडतालधाम यानी प्रगट परब्रह्म द्वारा स्वस्वरूप स्वहस्त से प्रतिष्ठित किया हुआ एकमात्र धाम।
वडतालधाम यानी आचार्य महाराजश्री का गादी स्थान।
वडतालधाम यानी एक अथवा अनेक मुमुक्षु पार्षदो को भागवती संत दीक्षा प्रदान करने का स्थान।
वडतालधाम यानी भक्तराज जोबनपगी की जन्म - कर्म भूमि।
वडतालधाम यानी भक्तराज बापुभाई की जन्म - कर्म भूमि।
वडतालधाम यानी भगवान श्री स्वामिनारायण की प्रसादीभूत वस्तुओ का संग्रह स्थान।
वडतालधाम यानी महामुक्त सद्.श्री मुक्तानन्द स्वामी के द्वारा कराए हुए सत्संग का गाँव।
वडतालधाम यानी पवित्र परमहंसो के पावन चरणारविंद से अंकित हुआ परमधाम।
वडतालधाम यानी प्रसादी के अनेक स्थानो से सुशोभित पवित्रधाम।
वडतालधाम यानी बीस वचनामृत की प्रागट्यभूमि का स्थान।
वडतालधाम यानी द्वारिका से आये हुए श्री गोमतीजी का निवास स्थान।
वडतालधाम यानी अखंड श्री स्वामिनारायण महामंत्र से गुंजित धाम।

"वस्या जहां अक्षरना निवासी, ते तुल्यता कोण कहेज काशी।
माहात्म्य तेनुं मनमां विचारे, द्वारावतीने वळती विसारे॥"

– श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.५

"वृतपुर महिमा कह्यो न जाय, कदी मुख शेष सहस्त्र कल्प गाय।
वृषसुत तणी मुख्य गादी ज्यां छे, त्रिभुवन तत्त्व अनेक तीर्थ त्यां छे॥"

– श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१३

(२) वडताल मंदिर अर्थात् ...

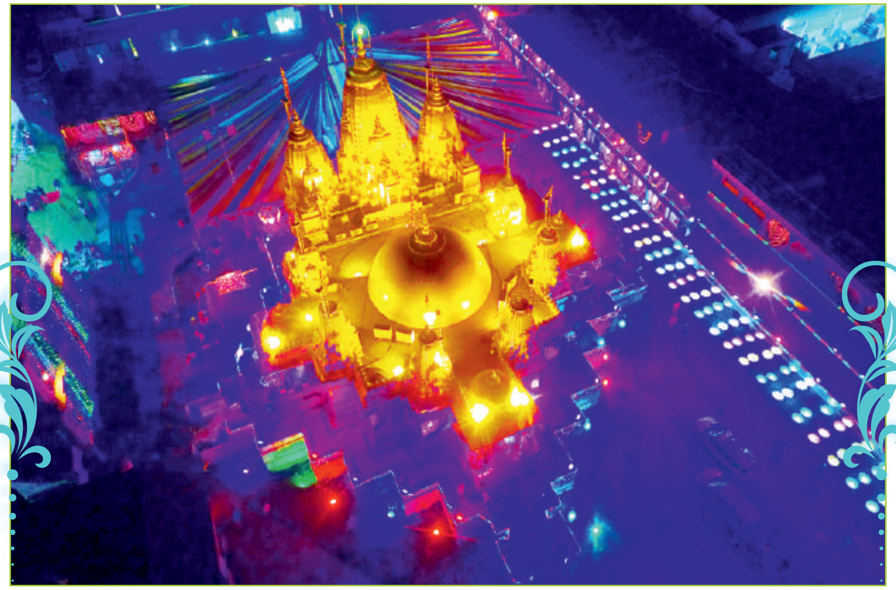

वडताल मंदिर अर्थात् भगवान श्री स्वामिनारायण की आज्ञा से निर्मित किया हुआ मंदिर।
वडताल मंदिर अर्थात् श्रीहरि द्वारा स्वयं भूमिपूजन किया हुआ मंदिर।
वडताल मंदिर अर्थात् यतिराज सद्.श्री ब्रह्मानन्द स्वामी द्वारा निर्मित भव्य मंदिर।
वडताल मंदिर अर्थात् श्रीहरिजी की देख रेख में बना हुआ मंदिर।
वडताल मंदिर अर्थात् जिसकी नींव मे नौ लाख ईंटे समाविष्ट है ऐसा महा मंदिर।
वडताल मंदिर अर्थात् नौ शिखरों के द्वारा कमलाकार सें सुशोभित कमनीय मंदिर।
वडताल मंदिर अर्थात् श्रीहरिजी के वरदहस्त से प्रतिष्ठित श्री लक्ष्मीनारायण देव का दर्शनीय मंदिर।
वडताल मंदिर अर्थात् उपास्य ईष्टदेव श्रीहरिकृष्ण महाराज की उपासना का केन्द्र स्थान मंदिर।
वडताल मंदिर अर्थात् स्वयं श्रीहरिजी के द्वारा लाई गई ईंटो से ओपीत हुआ मंदिर।
वडताल मंदिर अर्थात् संत-पार्षद एवं सत्संगीओं की सेवा से सु-सज्जित हुआ मंदिर।
वडताल मंदिर अर्थात् अनेक अवतारों के स्थानो से सुशोभित हुआ महामंदिर।
वडताल मंदिर अर्थात् श्रीहरिजी के द्वारा सजीवन कर नृत्य कराए हुए पुतलो से सुरम्य मंदिर।
वडताल मंदिर अर्थात् श्रीहरिजी ने एक साथ अनेकरूप धारण करके प्रतिष्ठा की आरती किया हुआ मंदिर।
वडताल मंदिर अर्थात् मुमुक्षुओ के लिए आत्यन्तिक मोक्ष का सदाव्रत प्रदान करता हुआ मंदिर।

(३) तीर्थराज वडतालधाम

"एक त्राजवे तीर्थ हजारे, बीजा त्राजवे वरताल धारे ।
धाम वैकुंठ आदि धराय, तोय वरताल तुल्य न थाय ॥"

– श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१३, कडी ६१

हे भक्तों ! हिन्दुस्तान तीर्थों का अनमोल खजाना है। विश्व के अनेक देशो में भौतिकता का प्रभाव है, परंतु वहाँ तीर्थक्षेत्रों का अभाव देखने मिलता है। वहाँ बडी-बडी ६६७१ किलोमीटर तक लम्बी नाईल जैसी नदीयाँ है; किन्तु उसे कोई तीर्थक्षेत्र नही कहता, क्योंकि उसके जल में प्रगट प्रभुने कभी स्नान नही किया।

परंतु वडतालधाम में स्थित गोमती सरोवर में तो प्रगट भगवान श्री स्वामिनारायण ने अनेकबार स्नान करके ; विशेषरूप से तीर्थत्त्व प्रदान किया है। अतः उसके तुल्य नाईल अथवा अमेजन जैसी लम्बी-लम्बी नदीयाँ अथवा विक्टोरिया और मिसिगन जैसे विशाल अनेक सरोवर भी नही आ सकते।

हे भक्तों ! भारत देश की पवित्र भूमि में भगवान और पवित्र संतो के पावन चरणों द्वारा विचरण के कारण अनेक तीर्थक्षेत्र है। ऐसे तीर्थो की शृंखला में भी कई तीर्थ तो इतने महान है कि, जिसका वर्णन शेषजी भी सहस्त्रमुखों से नही कर सकते और ऐसा ही एक तीर्थक्षेत्र यानी "वडतालधाम !!!" क्योंकि वडताल गाँव में स्वयं प्रगट परब्रह्म भगवान श्री स्वामिनारायण ने ४५ बार पधार कर पूरे गाँव की भूमि को अपने पावन - कल्याणकारी चरणारविंद से पावन किया है। इसी कारण यह वडताल गाँव "वडतालधाम" और "तीर्थराज" के नाम से विख्यात है।

हे भक्तों ! भारत वर्षे में अनेक तीर्थक्षेत्र है। उसमे भी ६८ तीर्थक्षेत्र मुख्यरूप से है। इनमें अयोध्या, मथुरा, हरिद्वार, काशी, कांची, उज्जैन और द्वारिका ये ७ पुरी श्रेष्ठ मानी जाती है। उसमे भी श्रेष्ठतम तीर्थ रामेश्वर, बद्रीनाथ, जगन्नाथपुरी और द्वारिका ये चारधाम कहे जाते है।

हे भक्तों ! ६८ तीर्थो, ७ पुरी और ४ धाम इन सभी तीर्थो में, जिनकी गणना उत्तम तीर्थो में होती है वह है द्वारिका तीर्थ। उस तीर्थ के आराध्यदेव श्री रणछोडराय स्वयं, संत "श्री सच्चिदानन्द स्वामी" की विनंती सें श्री गोमतीजी इत्यादि तीर्थो के साथ वडताल में निवास करके रहे है; इसी लिए वडतालधाम को तीर्थराज कहने मे किसी भी प्रकार की अतिशयोक्ति नहीं होगी।

(४) प्रसादीभूत स्थान की महिमा

"प्रभुपद रज होय जेह ठामे, अज भव आदि तहां स्वशीश नामे ।
पुनित करण तीर्थ त्यां गणाय, बहु महिमा मुखथी कह्यो न जाय ॥"

– श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.६ कडी ७२

हे भक्तों ! पूर्णपुरूषोत्तम भगवान श्री स्वामिनारायण के चरणारविंद से जो धरा भाग्यवंती हुई है, उनमें से एक है "वडतालधाम" । इसके भाग्य की तो क्या बात करे ? इसी लिए तो आचार्य श्री विहारीलालजी महाराज कहते है कि, "जहाँ पर (जिस स्थान में) प्रभुचरण की रज विद्यमान हो, वहाँ (उस स्थान में) सृष्टिकर्ता स्वयं ब्रह्माजी और संहारकर्ता महादेवजी भी, आकर महिमा सह वंदना करते है; एवं इस भूमि की चरणरज को अपने शीश पर लगाके अपना परम सौभाग्य समझते है। इसी लिए वैराग्यमूर्ति सद्. श्री निष्कुलानन्द स्वामी प्रभु की पावनकारी चरणरज की महिमा का वर्णन करते हुए 'पुरुषोत्तम प्रकाश' में लिखते है कि, ...

"धन्य भूमिका भाग्य अमित रे, थई हरिचरणे अंकित रे ।
धन्य धन्य ए सेरी बजार रे, जीयां हरि फर्या बहुवार रे ॥
धन्य घर ओसरी आंगणां रे, जीयां पगलां थया प्रभुतणा रे ।
जुवे सर्व स्थल ए संभारी रे, एक एकथी कल्याणकारी रे ॥
चरणरजे भर्यां भरपूर रे, स्परशे रज करे दुःख दूर रे ।
तियां पापी तजे कोई प्राण रे, ते पण पामे पद निर्वाण रे ॥"

– पुरुषोत्तम प्रकाश २६/२७

हे भक्तों ! वडताल धाम का कण कण श्रीहरि की पदरज से पावन है। बडे से बडे पापी जीव को भी अगर ऐसे महान प्रसादीभूत स्थान में मृत्यु प्राप्त हो तो उसकी उर्ध्वगति होती है एवं समस्त पाप कर्मो से मुक्ति हो जाती है। ऐसा सद.श्री निष्कुलानन्द स्वामीने लिखा है। ऐसे पवित्र स्थान में जिसे रहने का अवसर मिला हो; उसे तो श्रीहरिकृष्ण महाराज को बार बार थेंक्यु कहना चाहिए।

हे भक्तों ! भगवान श्री स्वामिनारायण ४५ बार वडताल पधारे और कई दिनो तक निवास कर घर घर को पावन किया तथा गाँव के खेतों में भी जाकर सकल भूमि को प्रसादीभूत किया है, अतः वडतालधाम में यात्रा कर प्रकट परब्रह्म के प्रसादीभूत कल्याणकारी स्थानों का अवश्य लाभ लेना चाहिए।

शमी पूजनकी छत्री

जलक्रीडाकी छत्री

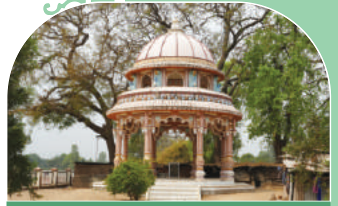
गोमती किनारे प्रसादकी छत्री

प्रसादकी छत्री

श्री हरिकृष्ण महाराज
वडतालधाम

(५) वडतालधाम की विशेषताएँ

हे भक्तों ! विश्व के हर धर्म में कुछ अनोखा और विशेष अवश्य होता है। हिन्दु धर्म में अनेकानेक संप्रदाय विद्यमान है और हर संप्रदाय की अपनी एक भिन्न पहचान है। उसमें भी एक ही सम्प्रदाय के अलग अलग स्थानों में भी हर एक स्थान की अपनी विशेषता होती है। तदनुसार श्री स्वामिनारायण संप्रदाय में भी वडतालधाम की जो विशेषताएँ है वे आपके समक्ष प्रस्तुत करते है।

हे भक्तों ! भगवान श्री स्वामिनारायण ने स्वयं छह मंदिरों का निर्माण किया है। प्रत्येक मंदिर मे पृथक्– पृथक् देवों को प्रतिष्ठित किया है, परंतु अपना स्वरूप 'श्रीहरिकृष्ण महाराज' वडतालधाम छोड कर और किसी भी मंदिर में अपने हाथो से प्रतिष्ठित नहीं किया है। यह वडतालधाम की पहली विलक्षण विशेषता है।

हे भक्तों ! दुसरी विशेषता है कि, आचार्य पद की स्थापना वडतालधाम में स्वयं श्रीहरि ने की है। तीसरी विशेषता है कि, शिक्षापत्री ग्रंथ की रचना भी वडतालधाम में स्वयं की है। चौथी विशेषता – द्वारिकाधीश श्रीरणछोडराय द्वारिका से श्री गोमतीजी इत्यादि तीर्थों को लेकर वडताल में पधारकर "श्री नारायण" की मूर्ति में अखंड निवास करके रहे है और श्री गोमतीजी 'धारु' सरोवर में निवास करके रही है, अत: वह सरोवर वर्तमान मे 'श्री गोमतीजी' नाम से विख्यात है। पांचवीं विशेषता– तप्तमुद्रा की निशानी लेने की आज्ञा भी वडतालधाम में ही स्वयं श्रीहरि ने की है। श्रीहरिलीलामृत ग्रंथ में उसका उल्लेख इस प्रकार से है :– स्वयं श्रीहरिवर समस्त संत–भक्त को आज्ञा करते हुए कहते है कि,

"वृत्तालय द्वारामतिथी विशेष, छे लक्ष्मीनारायण द्वारिकेश ।
आ गोमती उत्तम तीर्थदेवी, आंही ज शंखादिक छाप लेवी ॥
जे तप्तमुद्रा आंहि आवी लेशे, दूरे डरीने जमडा रहेशे ।
तेने ज सत्संगी गणीश मारो, माटे तमे सौ जन छाप धारो ॥"

हे भक्तों ! छठवीं विशेषता है कि, कार्तिकी और चैत्री, यह दो समैये (उत्सव समारोह) वडतालधाम मे ही करने की आज्ञा श्रीहरिजी द्वारा दी गई है। अहमदाबाद से श्री रामप्रतापजी और श्री अयोध्याप्रसादजी संतो–भक्तो के साथ वडतालधाम में दोनो समैये करने (सम्मिलित होने) के लिए आते थे।

(६) श्री लक्ष्मीजी का साधना स्थल

हे भक्तों ! वडतालधाम मे भगवान श्री स्वामिनारायण ने कमलाकार मंदिर बनाकर श्री लक्ष्मीनारायणदेव ही क्यों प्रतिष्ठित किए ? इसके पीछे का इतिहास आपके समक्ष प्रस्तुत करता हुं। उसे सुनकर वडतालधाम की महिमा विशेषरूप से समझमें आएगी।

हे भक्तों ! पूर्वकाल में ब्रह्माजी के मानसपुत्र भृगुऋषि और पत्नी ख्यातिदेवी, यह शुचि दंपति नर्मदातट (भरूच) में अपने आश्रम के संनिकट अरण्य में रहकर; श्री महालक्ष्मी माता की आराधना कर रहे थे। दोनो की आराधना से प्रसन्न होकर श्री महालक्ष्मीजी ने वरदान मांगने को कहा ; तब दोनो ने मांगा कि, "हमारे यहा आप पुत्री के रूप मे अवतरित होने की कृपा करें।" तब श्री महालक्ष्मीजीने "तथाऽस्तु" कहा।

श्री लक्ष्मीनारायण देव – वडतालधाम

प्यारे भक्त! तदनुसार समय व्यतित हुआ, श्री महालक्ष्मीजी भृगुऋषि की धर्मपत्नी ख्यातिदेवी के यहाँ पुत्रीरूप में प्रगट हुए। परंतु भगवान की अचरजकारी माया के कारण दोनो भूल गये कि, उनकी पुत्री साक्षात् श्री महालक्ष्मी माता है। पुत्री की युवावस्था हुई तब देवर्षि नारदजी उन्ही के आश्रम में पधारे। अत: दोनो ने पुत्री के भविष्य के बारे में पूछा। माने कि, स्वयं श्री लक्ष्मीजी भी माया के आवरण में आ गए है क्या ? उन दंपत्ति ने नारदजी से पूछा...

"रमा नारदने पगे लागी, वर जोड पोता तुल्य मागी ।
त्यारे बोल्या नारद ऋषिराय, तुंज योग्य तो विष्णु गणाय ॥
तप उग्र कर्युं होय ज्यारे, तेने विष्णु मळे वर त्यारे ।
कहे लक्ष्मी कह्युं तमे खरुं, कहो क्यां जईने तप करुं ?
कहे नारद सांभळ बाई, कहुं क्षेत्र अक्षय फळ दाई ।
महिसागर ने वेत्रवती, त्रीजी साभ्रमती करे गति ॥
तेह त्रणेना मध्ये पवन, पावन हितकारी छे हेडंबा वन ।
तमे त्यां रहीने तप करो, हैये ध्यान श्रीकृष्णनुं धरो ॥"
–श्रीहरिलीलामृत क.प, वि.२०

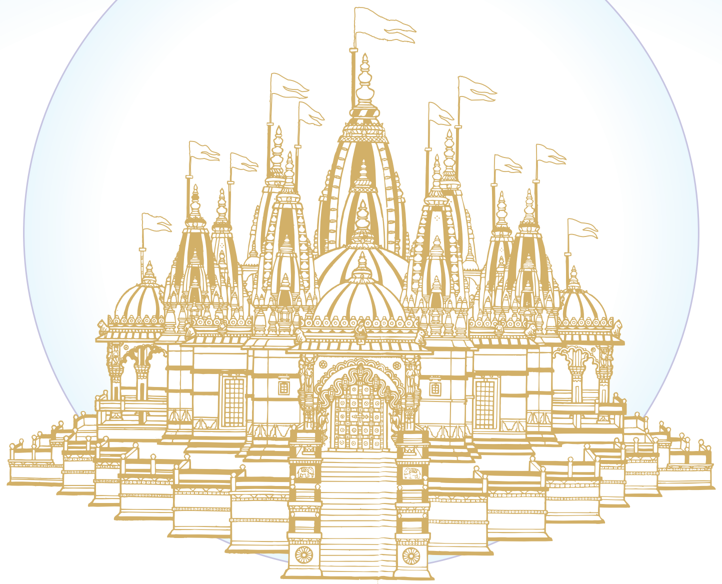

हे भक्तों ! नारदजी ने जो उपरोक्त स्थान लक्ष्मीजी को तप के लिए बताया, वही है वर्तमान वडतालधाम का मंदिर ! श्री लक्ष्मीजी हेडंबा वनमें (वडताल में) आए और एक विशाल बद्री के नीचे (आज जहां मंदिर है, उस स्थान में) बैठकर तपश्चर्या करने लगी। तपश्चर्या से प्रसन्न होकर भगवान श्री नारायण प्रगट हुए और इच्छित वर मांगने को कहा। तब श्री लक्ष्मीजीने मांगा..

'आप मेरे साथ विवाह करे और हंमेशा अपनी सेवा में रखे।'

हे भक्तों ! श्री लक्ष्मीजी पर प्रसन्न होकर श्री नारायण ने दुसरा वरदान मांगने कहा । तब श्री लक्ष्मीजी कहने लगे ...

"कमला कहे करुणा निधान, मने वालुं लागे छे आ स्थान ।
आंही मंदिर मोटुं रचाय, तेमां आपणी मूर्ति थपाय ॥
तीर्थ सर्वोपरी आ गणाय, करे पुण्य अक्षय फळ थाय ।
करे ईच्छाथी जो अनुष्ठान, पामे ते धन धान्य संतान ॥
मुनि मोटा आश्रम करी रहे, तीर्थ करवा ब्रह्मादिक चहे ।
करे भक्ति करीने आ ठामे, मोक्षार्थी ते मोक्षने पामे ॥ "
-श्रीहरिलीलामृत क.प, वि.२०

हे भक्तो ! श्री लक्ष्मीजी की ऐसी अलौकिक वरदानरूप याचना सुनकर भगवान श्री नारायण प्रसन्न होकर बोले, " कलियुग में अक्षरधाम के अधिपति परब्रह्म पुरुषोत्तम नारायण इस अवनी पर प्रकट होकर धर्म का स्थापन करेंगे और इस स्थान में ही भव्य मंदिर निर्माण कर हम दोनो को प्रतिष्ठित करेंगे।"

हे भक्तो ! श्री नारायण के वरदानानुसार और श्री लक्ष्मीजी ने मांगे हुए वरदान को सत्य करने लिए ही भगवान श्रीस्वामिनारायण ने उस बद्री वृक्ष के स्थान में भव्य मंदिर का निर्माण किया, और उसमे 'श्री लक्ष्मीनारायण देव' को प्रतिष्ठित किया है। वर्तमान में यह गगन-चुंबि, कमलाकार दिव्य-भव्य मंदिर जग प्रसिद्ध हो गया है। नाम है "श्री स्वामिनारायण मंदिर वडतालधाम" मंदिर के मध्य भाग में मुख्य शिखर में श्री लक्ष्मीनारायण देव प्रतिष्ठित किए है; क्योंकि श्री लक्ष्मीजी और श्री नारायण, दोनो का संकल्प इस स्थान में निवास करने का था।

(७) वर्णिवेश में वडताल में - घेला हनुमान

हे भक्तों ! भगवान श्री स्वामिनारायण बाल्यावस्था में तपश्चर्या करते हुए उत्तर - पूर्व और दक्षिण के तीर्थस्थानो को पावन करते - करते गुर्जरधरा के चरोतर प्रदेशस्थ वडताल गाँव में वि.सं.१८५५ के फाल्गुन शुक्ल १२ के सोमवार प्रभात होने पर, मंदिर से पूर्व दिशा में एक जलाशय है, जिसके तट पर श्री हनुमानजी का मंदिर है, वहा प्रथमबार पधारे । तब नीलकंठ वर्णिवेश में प्रभुजी की उम्र केवल १८ वर्ष की थी।

हे भक्तों ! श्री हनुमानजी के दर्शन करके वर्णिराज वहीं बैठे तभी वहाँ वडताल का मूल निवासी जग-विख्यात खूंखार लुंटेरा जोबनपगी आया । जोबनपगी डाका डालने वाला आक्रमक था फिर भी साधु-संत के प्रति पूज्यभाव रखता, इसलिए उन्होने वर्णिराज को वन्दन करके कहा, "जोगीराज ! यदि आप हमारे गाँव में रूकेंगे तो आपको रहने के लिए मैं निवास स्थान बना दूंगा ? " ऐसा सुनकर वर्णिराज कहने लगे...

"सुणी श्रीहरि
लाग्या उचरवा, म्हारे जावुं छे तीरथ करवा ।
अमे आवशुं वळतां ज्यारे, गाम रहेशुं तमारे ज त्यारे ॥
पछी जई ते पगीने भवन, भावे रांधीने कीधुं भोजन ।
देवकरण पगी तणे घेर, पोढ्या एकांतनी जाणी पेर ॥"
- श्रीहरिलीलामृत क.३, वि.१७

हे भक्तों ! फिर तो श्रीहरिवर सत्संग में स्थिर हुए और ४५ बार वडताल पधारे। एक बार तो श्रीजी महाराज यहां श्री हनुमानजी के मंदिर में आए और उनके सिर पर अपने दोनो हाथ रखकर प्रसादीभूत किया है। उसके निकट मे आया हुआ जलाशय भी प्रसादी का है। उसमें श्रीजी महाराज ने अनेकबार स्नान किया है। उसका वर्णन श्रीहरिलीलामृत ग्रंथ में इस प्रकार किया है।

"गामथी पूर्व दिशनुं तळाव, तेमां नाह्या मनोहर माव ।
घणी वार त्यां नटवर नाथे, जळ केळी करी सखा साथे ॥
हनुमाननी देरी छे तीर, तहां बेठा छे श्याम शरीर ।
हनुमान प्रसादीना कर्या, तेनी मूरति उपर कर धर्या ॥
समैयाने दिने अेकवार, आव्या दर्शने लोक अपार ।
हनुमानने धाबे बिराजी, कृष्णे दर्शन सौने दीधांजी ॥"
- श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१८

(८) बद्रीकाश्रम के मुनि वडताल में

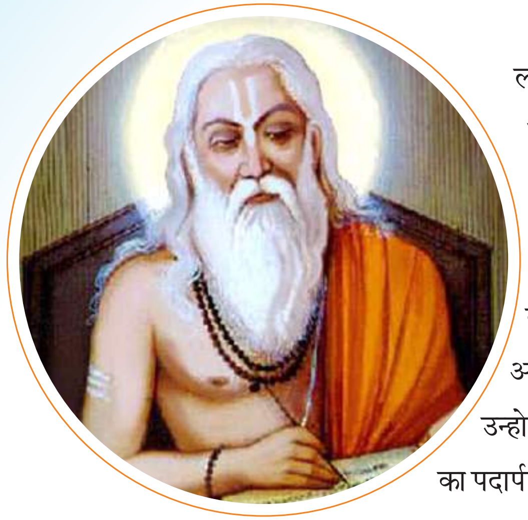

हे भक्तों ! एक बार बद्रीकाश्रम के एक सिद्ध मुनि, संन्यासी का वेश धारण कर तीर्थाटन करने लगे । अनेक तीर्थों में दर्शन करते हुए वह वडताल पधारे । वर्तमान मंदिर के स्थान पर तब एक विशाल बद्री वृक्ष था । उसे देखकर मुनि ने बद्री के नीचे अपना आवास किया । वे त्रिकालदर्शी होने से बद्री विषयक भूत-भविष्य दोनो काल के बारे में विद्ज्ञ थे ।

हे भक्तों ! वडताल गाँव में बापुभाई उर्फे कुबेरदास पटेल तथा उनके पुत्र रणछोडभाई दोनो मुमुक्षु थे । उन्हें प्रकट भगवान को प्राप्त करने की अत्यधिक इच्छा थी, इसी कारण उनके यहाँ आए हुए प्रत्येक साधु-संत -भक्त की सेवा करके 'प्रगट प्रभु की प्राप्ति का' आशीर्वाद मांगते थे । उन्होने बात सुनी अत: पिता-पुत्र शीध्रता से बद्री के पास आये और विनंती पूर्वक अपने घर पर संन्यासी का पदार्पण करवाया और उनके रहने की व्यवस्था कर दोनो महिमा पूर्वक सेवा करने लगे ।

हे भक्तों ! बद्रीकाश्रम के यह संन्यासी रात्रि में बापुभाई के यहाँ पर शयन करते और दिन मे बद्री के नीचे बैठकर कथा-वार्ता करते और पवित्र ब्राह्मण के घर जाकर भोजन कर आते । एक बार भगवानदास नामक अंध व्यक्ति ने संन्यासी के पास आकर प्रार्थना की कि 'मेरे उपर कृपा कर मुझे ज्योति प्रदान करें'; इस प्रकार विनंती के दीन वचन सुनकर संन्यासीने उसे द्दष्टि प्रदान की जिससे वह देखने लगा ।

मुनि की ऐसी सामर्थी जानकर बापुभाई और रणछोडभाई दोनो मुनि की सेवा विशेषरूप से करने लगे । पिता-पुत्र की शुद्ध सेवा-प्रेमभाव से प्रसन्न होकर संन्यासी ने दोनो को वरदान मांगने को कहा । तब दोनो ने मांगा कि, "हमे प्रगट भगवान मिले, ऐसा आशीर्वाद दीजिए । हमे मायिक सुख नही चाहिए । " तब संन्यासी बोले :-

"कोटि ब्रह्मांडना करनार, तेने लीधो छे नर अवतार ।
आज सोरठमां विचरे छे, कोटि जनना कल्याण करे छे ॥
थोडा मासमां सुंदर श्याम, आवशे बोचासण गाम ।
सोळ चिह्न चरणमां जणाय, तेथी जाणजो ते जगराय ॥"

– श्रीहरिलीलामृत क.५, वि.१८

(९) बापुभाई के घर श्रीजी पधारे

हे भक्तों ! वरदान देने के पश्चात् वह मुनि किसी को कहे बिना ही बद्रीकाश्रम चले गये । उपर वडताल मे रह रहे दोनो भक्त बारंबार बोचासण जाकर देखते थे कि, 'परब्रह्म पधारे है कि नहि ?' तब तो संदेश मिला कि, बोचासण मे काशीदासभाई के भुवन भगवान श्री स्वामिनारायण पधारे है । तत्काल बापुभाई और रणछोडदास दोनो बोचासण गए, वहाँ श्रीजी महाराज को दंडवत् प्रणाम करके बैठे । उसी समय श्रीहरिजी ने अपने चरणारविंद आगे किए जिससे दोनो को सोलह चिह्न के दर्शन हुए ।

हे भक्तों ! दिव्य सोलह चिह्नो के दर्शन होते ही 'यह साक्षात् भगवान है' ऐसा दोनो को भगवान श्री स्वामिनारायण के प्रति भगवद्भाव (इश्वरत्व)का निश्चय पक्का हो गया । उस समय मूलजी ब्रह्मचारी महाराज को भोजन करने बुलाने आए, तब श्रीहरिजी भोजन करने गए । वहा दोनो भक्तों को बुलाकर, महाराज ने दोनो को प्रसादी का थाल दिया । भोजन करने के बाद सभा हुई तत्पश्चात् प्रभुजी ने शयन किया । प्रात: काल मे सभा मे आकर श्रीजी महाराज बिराजमान हुए । उसी समय प्रभु की इच्छा उनको समाधी हो गई...

"जुवे छे वरताल निवासी, तेजोमय प्रभुनी छबी भासी ।
तेओ बेयने थै त्यां समाधि, जेम जोगकळा होय साधी ॥
जैने जोईयुं अक्षरधाम, दीठां त्यां पण श्रीघनश्याम ।
नर अक्षर सम कोटि दास, उभा सेवामां श्रीहरिपास ॥
ब्रह्मा विष्णु ने रुद्र गणाय, एवाने तो न दर्शन थाय ।"

– श्रीहरिलीलामृत क.५, वि.१९

हे भक्तों ! बाद में दोनो समाधि मे से जागृत हुए और सभा मे बैठे हुए सभी भक्तो के समक्ष अक्षरधाम का वर्णन किया जिसे सुनकर सभी आश्चर्यचकित हो गये । तत्पश्चत् दोनो भक्तो ने श्रीजी महाराज को वडताल पधारने की विनंती की । तब महाराजने कहा 'आज आप वडताल जाओ, हम कल आएंगे ।'

हे भक्तों ! वडताल आकर दोनो पिता-पुत्र तैयारीयाँ करने में जुट गये, । तब वडताल मे प्रगट प्रभुजी का आगमन हुआ । श्रीहरि ने बद्री के नीचे निवास किया, गंगाजलिए कुएं में संतो के साथ स्नान करके, पुन: बद्री की छाया में बैठे । पश्चात् बद्री के फलों का बालमुकुन्द को नैवेद्य किया !! बाद मे श्रीहरिजी ने भी खाए । उस वक्त वडताल के ग्रामजनो को लेकर ढोल नगाडो के साथ बापुभाई वहाँ आएं और समस्त संत सहित प्रभुजी की शोभायात्रा निकालकर, अपने घर लेजाकर , चरण पखारे और तत्पश्चात् वहीं पर निवास कराया ।

हे भक्तों ! वडताल में श्रीजी महाराज सर्व प्रथम वर्णिवेश मे वि.सं.१८५५ में पधारे थे, परंतु उस वक्त श्रीहरिजी को कोई भगवान रूप में कोई नहीं जानता था । तत्पश्चात् पाँच साल बीत जाने के बाद वि.सं. १८६० (ईस.१९०४) मे पुन: इस वक्त बापुभाई के घर पधारे । इस वक्त गुजरात की धरा पर भगवान श्री स्वामिनारायण महाप्रभु को माननेवाले आश्रितो की संख्या हजारों से अधिक थी और दिन-प्रतिदिन इसमें वृद्धि हो रही थी ।

हे भक्तों ! बापुभाई को आठ पुत्र थे । वे सभी श्रीहरिजी के आश्रित हुए । वडताल में सर्व प्रथम बापुभाई सत्संगी हुए और भगवान श्री स्वामिनारायण को वडताल में सर्व प्रथम वे ही लाए थे । उनके घर में प्रभुने अनेक बार निवास किया था । उन्होने आजीवन श्रीहरिवर एवं संतो की तन-मन और धन से बहुत सेवा की ।

(१०) भक्तराज वासण सुथार

"सारा सुतार वासण नाम, आव्या ते कथा सुणवा काम ।
दैवी जीव मुमुक्षु छे तेह, थया तरत ज आश्रित एह ॥
कर जोडीने विनंती करी, मारे घेर पधारो श्रीहरि ।
त्यारे भक्तवत्सल भगवान, गया तेह सुतारने स्थान ॥"
– श्रीहरिलीलामृत क.५, वि.१९

हे भक्तों ! वासण सुतार कथा का श्रवण कर सत्संगी बने थे। जिससे बाद में श्रीजी महाराज अनेक बार वासण सुथार के घर पर निवास करते थे। इसलिए उनका घर अति प्रसादीभूत कहा जाता है। सुतार भक्त पर श्रीजी महाराज बहुत प्रसन्न थे। वासण सुतार ने अपनी वृद्धावस्था होने पर अपना प्रसादीभूत घर श्रीजी महाराज को कृष्णार्पण किया था। वर्तमान समय में इस प्रसादीभूत स्थान में सांख्ययोगी बहने रहकर भजन-भक्ति कर रहे है।

हे भक्तों ! जहाँ महाराज बिराजमान होते थे, वहाँ पर सिंहासन रखा गया है, उसमे श्रीजी महाराज की चित्रप्रतिमा प्रतिष्ठित है, और प्रभुजी की पादुका भी वहा दर्शनार्थ प्रतिष्ठित है। आचार्य श्री रघुवीरजी महाराज की धर्मपत्नी विरजादेवी जिन चरणारविंद की पूजा करती थी, वह भी यहा दर्शनार्थ प्रतिष्ठित है। इसलिए तो इस घर की तुलना गढपुर स्थित वासुदेव नारायण के ओरडे (भुवन) से करते हुए हरिलीलामृत में लिखा गया है की

"वळी वासण नामे सुतार, प्रसादीनु छे एनु अगार ।
वासुदेव नारायण केरो, जे छे ओरडो पुनीत घणेरो ॥
गढपुर मांहि ते तो प्रमाणो, एवुं वासणनुं घर जाणो । "
– श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१७

(११) आदर्श भक्त जोबनपगी

हे भक्तों ! गरवी गुर्जर धरा के चरोतर प्रांतस्थ वडतालधाम का स्मरण करते ही असंख्य नर-नारी को नितान्त शांति का अनुभव होता है। क्योकि ; इस धाम में सर्वावतारी श्री हरिकृष्ण महाराज प्रकट बिराजमान है। इस अलौकिक कार्य का संपूर्ण श्रेय जोबनपगी और बापुभाई इत्यादिक भक्तो को जाता है। आज विश्व में "नरसिंह मेहता की करताल, गांधीजी की हडताल और भगवान श्री स्वामिनारायण का वडताल" सुप्रसिद्ध है।

हे भक्तों ! वडताल के जोबनपगी जितने बडे खूंखार लूंटेरे थे, उतने ही बडे आदर्श भक्त बने थे। उनके पूर्वजन्म की कथा "उन्मत गंगा माहात्म्य" ग्रंथ के अध्याय १२३ में आलेखित है, वहा से विस्तारत: समझ लेना चाहिए। यहा तो संक्षिप्त: प्रस्तुत करते है।

हे भक्तों ! पूर्व जन्म में वह सज्जन क्षत्रिय थे, किन्तु कुसंग का योग होने से कुसंगी हो गए । बाद मे किये हुए पाप का पश्चाताप होने से एक पवित्र संत का आशीर्वाद प्राप्त हुआ कि, 'अगले जन्म में तुझे प्रगट भगवान मिलेंगे।'

हे भक्तों ! जोबन का दुसरा जन्म वडताल गांव में 'भाया भाई पगी' की धर्मपत्नी 'वखतबा' की कोख से वि.सं.१८३१ मे हुआ था। माता-पिताने पुत्र का नाम जोबन रखा। बडे होते ही वडताल में आए हुए वामाचारी बावाओ की संगती हुई जिससे कुसंग के कारण चोरी, लूटमार और हिंसा के मार्ग पर चल पडे।

हे भक्तों ! वि.सं.१८५५ में जोबन भक्त को वडताल मे ही सर्वप्रथम नीलकंठ वर्णिवेश में प्रभुजी का मिलन हुआ किन्तु जीवन परिवर्तन नही हुआ। दुसरी बार वि.सं.१८६० में वडताल में बापुभाई पाटीदार के भुवन भगवान श्री स्वामिनारायण पधारे थे, तब रात्री के समय में जोबनपगी, महाराज की घोडी चुराने के लिए आए थे। किन्तु रायजीभाई के कारण असफल रहे।

हे भक्तों ! कुछ समय बाद अ.मु. सद्.श्री मुक्तानन्द स्वामी वडताल पधारे। वडेउ माताजी के मंदिर में निवास किया। वहाँ जोबनपगी स्वामीश्री के दर्शन करने आए, तब स्वामीश्री ने जोबनपगी को ठाकुरजी की थाल की प्रसादी देकर भोजन कराया और कथा-वार्ता सुनाई। जिनके वचनों से पत्थर भी पघल जाए ऐसे महामुनि के वचन सुनकर अनेक मुमुक्षुओ का जीवन परिवर्तन हो गया और वे सत्संगी हुए।

(१२) हवेली पर बैठे महाराज

हे भक्तों ! जोबनपगी ने मुनिवर मुक्तानन्द स्वामी का ऐसा शुद्ध साधुता सम्पन्न वर्तन देखकर बहुत गुण ग्रहण किया और स्वामीश्री को अपना गुरु स्वीकारा। लेकिन उनके पापो को भस्मिभूत करने के लिए बडी तोप की आवश्यकता थी। अत्यधिक पाप होने के कारण अध्यात्म मार्ग पर आगे बढने में विलम्ब होना अपेक्षित था।

हे भक्तों ! समय व्यतीत होने पर वि.सं. १८६६ मे भगवान श्री स्वामिनारायण डभाण गाँव में भव्य यज्ञ कर रहे थे। वहां जोबनपगी रात्री की बेला में घोडे चुराने गए, परंतु प्रत्येक घोडे के साथ महाराज विद्यमान थे ! अनवरत तीन-तीन रात्री पर्यन्त प्रयत्न किए, परंतु जब वह घोडे या घोडी छोडने जाते, तो वहाँ महाराज दिखाई देते। कही पर श्रीहरिजी घोडे पर हाथ सहला रहे थे, तो कही पर घोडी को घास खिला रहे थे, तो कही पर घोडी को तेल मर्दन कर रहे थे, तो कही पर घोडे को पानी पीला रहे थे ! इस प्रसंग का आलेखन सद्.श्री निष्कुलानन्द स्वामी करते है।

"त्रण दिवसना भूख्या तरस्या, नयणे निद्रा नव करी ।
आवीने जुए अश्वने, त्यां घोडे घोडे दिठ्या हरि ॥"
- भक्तचिंतामणि : प्र.५९

हे भक्तों ! बाद में पोष शुक्ल १० की प्रातः कालीन सभा में, जोबनपगी आए और श्रीहरिजी से वर्तमान (दीक्षा) लेकर पक्के सत्संगी हो गए। अपने घर वापस लौटते रास्ते में उनका मन डगमगा और उन्होंने सोचा कि, 'मैं वडताल पहुंचू तब मेरी हवेली की खिडकी पर श्रीजी महाराज बैठे हो, ऐसा दर्शन मुझे दे तो वह सच्चे भगवान !'

"मारी मेडीनी बारीये शाम, बेठा देखुं जई मुज गाम ।
तो हुं अत्यंत आनंद पामी, जाणुं एहने अंतरजामी ॥
पछी ज्यां निज शेरीमां पेठा, दीठा श्रीहरि बारिये बेठा ।
रोमहर्ष थयो आखे अंगे, आव्यां प्रेमनां आंसु उमंगे ॥"
- श्रीहरिलीलामृत क.७, वि.१२

हे भक्तों ! जोबनपगी साथियों के साथ वडताल आये और जब अपनी हवेली के सन्निकट आए तो वहाँ की खिडकी पर महाराज को बैठे हुए देखा ! उस वक्त वह रोमांचित हो गये और आँख से प्रेम की अश्रुधारा बहने लगी। फिर तो ऐसा निश्चय हो गया कि, तन-मन और धन सर्वस्व श्रीहरिवर को कृष्णार्पण करके परम एकान्तिक भक्तों की पंक्ति में आ गए। वडताल निवासी जोबनभक्त के प्रसंग संप्रदाय के ग्रंथो में ग्रंथित है। विशेषरूप से कुंडलधाम से प्रकाशित हुए "भक्त - आख्यान" नामक ग्रन्थ में है।

"हरिभक्त तणां आख्यान, सुणीये थईने सावधान ।
तेथी तेना जेवा गुण आवे, प्रीति प्रभुपदमां उपजावे ॥
एेवा भक्तनुं आख्यान गाय, एनुं अंतर निर्मळ थाय ।
एवा थाय हरिजन जेह, तेनो सुफळ थयो नरदेह ॥"
- श्रीहरिलीलामृत क.७, वि.७६, क.३, वि.१६

(१३) बामरोली की खिरनी

हे भक्तों ! बामरोली गाँव वडताल से उत्तर की ओर महुडियापुरा गाँव से आगे आया है। वहाँ तखापगी भगवन्निष्ठ सत्संगी हुए थे। वि.सं. १८६० में मुनिवर्य सद्.श्री मुक्तानन्द स्वामी वडताल मे सत्संग प्रचार के लिए आए थे, तब तखापगी सत्संगी हुए थे। बाद में वह सद्.श्री मुक्तानन्द स्वामी को अपने गाँव बामरोली ले आए थे। वहाँ स्वामीश्री के समागम के कारण अनेक नए सत्संगी हुए।

हे भक्तों ! तखा भक्त की विनंति से भगवान श्री स्वामिनारायण अनेक बार बामरोली पधारे। वि.सं. १८६२ में श्रीहरिजी प्रथम बार बामरोली में पधारे। वहाँ तखा पगी के खेत में एक खिरनी का बडा वृक्ष था, वहाँ प्रातःकाल में श्रीहरिजीने दंतधावन किया, तत्पश्चात् वहाँ स्थित कुंए के जल से स्नान किया और अपनी नित्यविधि सम्पन्न की।

हे भक्तों ! जिस जल से प्रभुजी ने स्नान किया था, उस प्रसादीभूत जल को लेकर तखा पगी ने कुंए मे डाला, इसलिए वह प्रसादीभूत है। बामरोली के अनेक नर-नारी उस प्रसादी के जल को पीकर सत्संगी हुए थे।

हे भक्तों ! नित्यविधि करके श्रीहरिजी उस खिरनी पेड के नीचे तख्त पर बिराजमान होकर कथा-वार्ता करते। तत्पश्चात् तखा पगीने प्रभुजी को भोजन करने का आग्रह किया, किन्तु शीध्रता से वडताल पहुँचना था इसलिए श्रीहरि ने मना कर दिया तब तखा भक्त आम की टोकरीयाँ ले आए और प्रभुजी को ग्रहण करने की विनंति की। भक्त का भाव देखकर भगवान ने उन्हें ग्रहण किया और दुसरे आम साथ आए हुए संतो को बाँट दिए।

हे भक्तों ! वि.सं. १८६६ मे श्रीहरिजी बामरोली पधारे। वहा से तखा पगी के घर पधार कर महुडियापरा पधारे थे। वि.सं.१८७० में भी तखा पगी के प्रेमभाव के कारण बामरोली जाकर आमरस पूरी की रसोई ग्रहण की और साथ में आए हुए सभी संतो-भक्तो को भी आग्रहपूर्वक भोजन कराया था।

वि.सं. १८७१ के अश्वीनी मास मे भी श्रीहरिजी बामरोली पधारे और शरदपूर्णिमा का उत्सव करके नवीन चावल के पौंहे दूध-मिश्रि के साथ ग्रहण किया, साथ में सभी संतो-भक्तो ने भी प्रसाद लिया । बाद में खिरनी के पेड के नीचे झुला बांध कर श्रीहरिजी को झूलाया और संतोने गरबी (रास) लेकर उत्सव के कीर्तनो का गान किया ।

(१४) खिरनी पर अनेक बार झूले

हे भक्तों ! वि.सं.१८७२ में वडताल में भव्य फूलदोलोत्सव करके, तखा पगी की विनंति से श्रीहरिवर बामरोली पधारे। वहाँ खिरनी के वृक्ष की शाखा पर झुला बांधकर संतो - भक्तो ने महाराज को प्रेमभाव से झूलाया। उसके बाद श्रीहरिजी ने वहाँ संतो-भक्तो के साथ रंगोत्सव किया। बाद में पूर्व दिशा की ओर स्थित कुए के जल से स्नान करके, कुए को प्रसादीभूत किया।

हे भक्तों ! तखा पगी के प्रेम-भाव के कारण भगवान श्रीहरिजी उस वर्ष बैशाख मास में बामरोली पधारे । तब भी प्रेमीभक्तोने खिरनी के पेड की शाखा पर झूला बांधकर प्रगट प्रभुजी को खूब झूलाया और प्रसन्नता प्राप्त की। पश्चात् श्रीहरिजीने आम का रस और रोटी ग्रहण की और बाद में थोडी देर के लिए शय्या पर आराम किया। जब जागृत हुए तब तखा पगी ने विनंती पूर्वक कहा, "महाराज ! यहाँ रासोत्सव करने के लिए आठ गाडी भरके आम लाए थे। उसमे सें सभी संतो-भक्तो ने ग्रहण तो किए किन्तु तद्पुरांत जितने आम बचे हैं उसे आप अपने हाथो से प्रसादीभूत करके पुनः संतो-भक्तो को दीजिए।" पश्चात् श्रीहरिजी ने सभी को पेट भर आम देकर तृप्त किया।

हे भक्तों ! वि.सं.१८७९ में वडताल मंदिर का काम व्यवस्थित चल रहा था, तब श्रीहरिवर ने देश-देशांतर से सत्संगीओ को आमंत्रित कर वसंत पंचमी का भव्य समैया(समारोह) किया था। उस वक्त बामरोली से आए हुए तखा पगीने श्रीहरिजी को प्रेमपूर्वक कहा कि, "हे कृपानाथ ! आप बामरोली में पधारे और भक्तो के मनोरथ पूर्ण कीजिए।"आप मेरे गाँव में जो लीला चरित्र करते है वह शास्त्रो में आलेखित होता है। इसलिए हमारे गाँव को प्रसादीभूत तीर्थक्षेत्र समझकर, भविष्य में भी यहा संत-भक्त गण लीला स्थानो के दर्शन करने आए, हमारे गाँव के लोगो को उनके दर्शन का एवं सेवा का लाभ मिल सके।"

हे भक्तों ! इस प्रकार, तखा पगी के प्रेम वचन सुनकर दयालु श्रीहरिजी; वडताल में आए हुए समस्त सत्संगीओ के संघ को लेकर बामरोली पधारे और खिरनी के वृक्ष के नीचे भव्य रंगोत्सव किया। फिर महाराज महुडियापरा में जालमजी पगी के घर पधारे। तदुपरांत अनेक बार श्रीजी महाराज बामरोली पधारे, तथा खिरनी के नीचे बिराजमान होकर झुले है। इसीलिए यह स्थान महाप्रसादी का होने से दर्शनार्थ अवश्य जाना चाहिए।

(१५) बामरोली की कोठी का इतिहास

हे भक्तों ! भगवान श्री स्वामिनारायण का स्वभाव परम दयालु है। वे किसी का भी दुःख नही देख सकते। जो सत्संगी न हो उसका भी दुःख देखकर द्रवीत हो जाते फिर अपने आश्रितो के दुःख को कैसे बरदाश्त कर सकते है ?

हे भक्तों ! वि.सं.१८६९ में हुई अनावृष्टि को संप्रदाय के ग्रन्थो में 'ओगणोतेरो काल' नाम से वर्णन गया है। यह अकाल होने के ठीक एक साल पूर्व, श्रीहरिजी समस्त सत्संग में विचरण करते हुए, भविष्य भयंकर अकाल से निपटने के लिए सूचित कर रहे थे कि, 'अपने गहने अथवा पशुओ को बेचकर भी पर्याप्त मात्रा में धान्य संग्रहीत करे।'

हे भक्तों ! जिस जिसने श्रीहरिजी के वचन में विश्वास किया, उस-उसने अन्न का संग्रह कर लिया। ऐसे समय में बामरोली के भक्त तखा पगी को भी धान्य संग्रहीत करने को कहा गया था, लेकिन उन्होने विचार किया , 'अभी तो वक्त आने में बहुत देरी है, अतः वक्त आने पर धान्य संग्रहीत करेंगे' इस प्रकार वर्ष का समय व्यतीत हो गया और दुष्काल ने अपना काम शुरु किया। घर में बचा हुआ धान्य भी धीरे-धीरे कम होने लगा, इसलिए परिवार सहित भक्त चिंतित हुए।

हे भक्तों ! उसी वक्त भक्तवत्सल श्रीजी महाराज बामरोली पधारे, तखा पगी के घर जाकर धान्य के विषय में पूछा। तब उनकी पुत्री ने कहा, "महाराज ! आधा मण बाजरा बचा है।" तब दयालु प्रभुजीने कहा "इस कोठी का ढक्कन उपर से बंध करके गोबर से लीप दो, इसे कभी भी खोलने का प्रयत्न न करे और कोठी के साने में से बाजरा निकाल कर उपयोग करना तथा अपने यहा आए हुए अन्नार्थी को प्रदान करना। अब से यह कोठी अक्षयपात्र हुई है अतः इसमें से कभी भी बाजरा समाप्त नही होगा ; किन्तु उपर से कभी भी खोलने की कोशिश न करे।" इस प्रकार वरदान देकर श्रीहरिजीने अपने दोनो हाथ कोठी पर रखकर प्रसादीभूत कर दिया और वडताल पधारे। भक्तवत्सल श्रीहरिजी की ऐसी चमत्कारी करूणा देखकर भक्त तखापगी आज्ञा का महत्त्व समझते हुए, विशेषरूप से भक्ति करने लगे।

हे भक्तों ! श्रीहरिजी के वरदानानुसार अनावृष्टि की वेला समाप्त होने तक कोठी में से बाजरा निकाला गया तब भी कोठी अखुट रही। दुसरे साल बारिश होने से विपुल मात्रा में धान्य उत्पन्न हुआ, इसलिए तखापगीने दुसरी अनेक कोठी में धान्य संग्रहीत कर लिया।

हे भक्तों ! श्रीहरिजीने दुष्काल के समय में दो-चार आश्रितो को इस प्रकार कोठी में धान्य संग्रहित करके, उपर से बंध करने को कहा था। उन सभीने यथावत् आज्ञा पालन किया। परंतु सुकाल होते ही श्रीहरिजी की ईच्छा से वे सभी भक्तजनो के मन में कोठी खोलने का विचार हुआ और उन्होंने ऐसा ही किया। क्योंकि, श्रीहरिजी को ऐसा संकल्प हुआ कि, 'मेरे आश्रित भक्तों को मैं इस प्रकार हंमेशा के लिए धान्य प्रदान करता रहुं तो वे आलसी हो जायेगे, इसलिए परिश्रम करके धान्य उत्पन्न करे तो शारीरिक स्वास्थ्य अच्छा रहेगा और परिश्रम से बनाई हुई रोटी भी मीठी लगे।'

हे भक्तों ! श्रीहरिजी की इच्छा से तखा पगी को भी ऐसा संकल्प हुआ कि, "चलो देख लेते है कि, यह छोटी सी कोठी में कितना बाजरा है ? भक्त ने कोठी का ढक्कन खोल कर देखा तो एक साल पूर्व आधा मण बाजरा था उतना ही था ! किन्तु कुछ ही दिनों में वह बाजरा समाप्त हो गया !"

हे भक्तों ! वही प्रसादीभूत कोठी वर्तमान समय में बामरोली मंदिर में दर्शनार्थ रखी गई है। कई भक्त गण कोठी और खिरनी का दर्शन करने जाते है। जब भी अवसर हो तब वहां दर्शन करने के लिए अवश्य जाना चाहिए। बामरोली गांव वडताल से अंदाजन दो कि.मी. दूर स्थित है।

(१६) प्रसादी की वडेउ माता

"धर्मशाला वडेउ मातानी, प्रसादीनी छे ते नथी छानी ।
मुक्तानंद आदिक मुनिराय, घणी वार उतरता त्यांय ॥
नारायणगर बावानो मठ, प्रसादीनो छे ते तो झपट ।
घणीवार बिराज्या छे स्वामी, सहजानंद अंतरजामी ॥
घणीवार जम्या गिरिधारी, घणीवार सभा सजी सारी ।
भाळी गोसाईनो भाव सारो, मुक्तानंदादि करता उतारो ॥"
- श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१७

हे भक्तों ! उपरोक्त लेखनानुसार वडेउ माता और उस स्थान के महंत नारायणगिरि का मठ दोनो प्रसादीभूत है। वडेउ माता की धर्मशाला और गिरि का मठ दोनो स्थान, अपने मंदिर के मुख्य प्रवेश द्वार से दाईं ओर पूर्व दिशा में चलते ही आ जाते है। इस मंदिर में स्थित मूर्ति को श्रीहरिजी ने रंग से अभिषेक करके प्रसादीभूत किया है। जिस समय अपने मंदिर की जगह नही थी, तब संतो की धर्मशाला के रूप मे इसका उपयोग होता था।

हे भक्तों ! यह वडेउ माता की पूजा गोंसाई भक्त नारायणगिरि करते थे। माताजी के मंदिर पास की जगह पर उनका मठ था। नारायणगिरि भगवान श्रीस्वामिनारायण को अपने इष्टदेव के रूप में मानते थे और उन्होंने प्रगट प्रभु की आज्ञानुसार ही अपना जीवन जिया। मंदिर के निर्माण कार्य में उनका महत्वपूर्ण आर्थिक योगदान है।

हे भक्तों ! वि.सं.१८६२ का चैत्री समैया करने के लिए महाराज वडताल पधारे थे, तब नारायणगिरी ने अपने मठ में आमंत्रित कर श्रीहरिवर एवं संतो को मालपुआ और दूधपाक की रसोई बना के भोजन कराया था। तत्पश्चत् गिरिने श्रीहरिजी को झुले पर बिराजीत कर केसर- चंदन से पूजा की और फूलहार पहनाकर मठ में कुंमकुम के चरण करके छापे ली थी।

हे भक्तों ! महाराज एकबार गढपुर सें वडताल पधारे थे, तब नारायणगिरि के मठ में निवास किया था। इस प्रसंग का वर्णन श्रीहरिलीलामृत ग्रन्थ के, सातवें कलश के ४७ वें विश्राम में किया है,

"नारायण गर बावानी मेडी, तहां लई गया सौ जन तेडी ।
कर्यो त्यां रूडी रीते उतारो, रीझ्या जोईने धर्मदुलारो ॥"

हे भक्तों ! श्रीहरिजी नारायणगिरि के मठ मे ठहरे थे, उस वक्त का एक प्रसंग सुनिए। वडताल गाँव का जो जलाशय घेला हनुमानजी के पास है, वहा से ईशान की ओर एक आमवृक्ष था, उस पर रमणीय झुला बांध कर प्रभुजी को झुलने की विनंती करी। जब श्रीहरिजी बैठने गए तो झुला थोडा छोटा था। उसी वक्त श्रीहरिजीने अपना शरीर छोटा कर लिया !! और झुले पर बिराजीत होकर झुलने लगे।

"हतो हिंडोल नानो हे भूप, नाथे त्यां धर्यु नानु स्वरूप ।
जोई जनमन विस्मित थाय, जाण्यो श्रीहरिनो महिमाय ॥
एवां पावनकारी पवित्र, करे नाथ विचित्र चरित्र ।"
-श्रीहरिलीलामृत क.७, वि.४७

(१७) सोनार कूई

"एक सोनार कूई छे सारी, प्रसादीनी करी छे मुरारी ।
वळी त्यां छे रूडा वड बेय, जाणो तेह प्रसादीना छेय ॥
उमरेठथी आवता ज्यारे, वड हेठे उतरता त्यारे ।
ए ज कूई तणुं जळ पीता, तेथी जाणवी परम पुनिता ॥"
- श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१८

हे भक्तों ! मंदिर से पूर्वदिशा की ओर दो-तीन किलोमीटर दूर एक कूई है। उसका नाम सोनार कूई है। भगवान श्री स्वामिनारायण ने अनेकबार इसके जल का पान किया है। उनके निकट में दो बडे बरगद के पेड थे। उसके नीचे भी महाराज बिराजित होते थे। श्रीजी महाराज जब जब उमरेठ की ओर सें वडताल पधारते थे तब तब इस बरगद के नीचे बैठकर विश्राम करते और इस कूई का जल पीते । इसलिए यह स्थान परम पवित्र है, दर्शनीय है, अतः इस स्थान पर अवश्य जाना चाहिए।

"झमकुबा सोनारकूई आये थे "

हे भक्तों ! झमकुबा उदेपुर से गुजरात श्रीहरिजी के दर्शन हेतु आए थे। वे महाराज को सर्वप्रथम कहां मीले ? यह प्रसंग संप्रदाय के ग्रन्थो में उपलब्ध है। उनमे से 'सद्. श्री अद्भूतानन्द स्वामी की बाते' नामक ग्रन्थ के अनुसार यह प्रसंग वडताल अन्तर्गत आलेखित है।

हे भक्तों ! सद्.श्री अद्भूतानन्द स्वामी लिखते है कि, "झमकुबा को रास्ते में एक ब्राह्मण मिला, उसने कहा कि, 'मुझे भी गुजरात जाना है, तो चलो हम दोनो साथ चले।' इस प्रकार स्वयं साथ मे चले और समय - समयानुसार खाने-पीने की, सभी प्रकार से सार - संभाल रखते हुए, कुछ दिन रास्ते में बिताते हुए, वडताल की सीमामें 'सोनार कूई' के आगे जो तालाब है वहां आकर बैठे।"

हे भक्तों ! स्वयं श्रीजी महाराज ब्राह्मण का वेश लेकर झमकुबा को सोनार कूई तक लाए थे। वहां आकर बोले कि, "आप इस मार्ग पर आगे बढो कुछ ही देर में वडताल गांव आएगा, वहां भगवान श्री स्वामिनारायण बिराजमान है। तो आप वहां जाओ, मैं भी शौच-स्नानादिक करके पहुंचता हुं।"

(इस प्रकार कहकर ब्राह्मण के वेश में आए हुए श्री महाराज अदृश्य हो गए।)

(१८) गोपी तालाब

"त्यांथी उत्तरे गोपी तळाव, तेमां नाह्यां मनोहर माव ।
पौंवा दूध संतोने जमाड्या, वळी रात्रिये रास रमाड्या ॥
एवी लीला करी छे अमूल्य, तेथी ते तो वृंदावन तूल्य ।"
- श्रीहरिलीलामृत, क.१, वि.१८

हे भक्तों ! सोनार कूई से उत्तर दिशा की ओर गोपी तालाब विद्यमान है। इसमें भगवान श्री स्वामिनारायण ने अनेकबार स्नान किया है और श्रीहरिजी जब शरद पूर्णिमा का उत्सव करने के लिए वडताल पधारे थे, तब समस्त संतो-भक्तो को साथ लेकर इस स्थान पर आए थे और यहां तट पर छोटे से मंडप के नीचे ठाकुरजी की पांच आरती सम्पन्न करके, संतो को रास क्रीडा करने की आज्ञा की। इसलिए संतो ने शरद पूर्णिमा विषयक कीर्तन गान करते हुए, रजनी की वेला में रास क्रीडा का आनन्दानुभव किया।

हे भक्तों ! यह स्थान वृंदावन के तुल्य है; क्योकि वृन्दावन में ५१०० वर्ष पूर्व श्रीकृष्णचन्द्र भगवान ने शरद पूर्णिमा की रजनी में गोपीयो के साथ महारास किया था, वैसे ही वडताल में आए हुए गोपी तालाब में भी श्रीजी महाराजने संतो के साथ महारास किया, इस हेतु से संतो को गोपीओ की और इस स्थान को वृन्दावन की उपमा दी गई है।

(१९) ताडण तालाब

"रस्ते आवे जता जोळ्य गाम, सरोवर शुभ टाडण नाम ।
तेमां संत सखा लई साथ, घणी वार नाह्या मुनि नाथ ॥
तेनो पश्चिमनो जे किनारो, मध्यभाग किनारानो सारो ।
धर्मकुळ तणो प्रथम मेळाप, कर्यो ते स्थळमां प्रभु आप ॥
माटे ते स्थळ माहात्म्य मोटुं, नथी पुष्कर राजथी छोटुं ।
पंपा सरोवर ते शा हिसाबे ? मान सरोवरने पण दाबे ॥"
– श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१९

हे भक्तों ! वडताल गाँव के पूर्वी भूभागस्थ जलाशय सें दक्षिण की ओर जोळ गाँव का रास्ता है। उस मार्ग पर ताडण तालाब आया है। यहाँ श्रीहरिजी ने संतो–भक्तो के साथ अनेकबार स्नान किया है।

हे भक्तों ! द्वापरयुग में भगवान श्री कृष्ण बाल्यावस्था में जब वृंदावन मे रहते, तब भाद्र शुक्ल एकादशी के दिन; श्रीकृष्ण भगवान ने मखखन बेचने जा रही गोपियों के पास करवसूली के रूप में मखखन लिया था और इसी खुशी में गोप–बालको ने कनैया को नाँव मे बैठा कर युमना नदी में नौका विहार कराया था। युमना के तट पर उगाए हुए खीरे की वेल में सें ककडी तोडकर गोप बालको ने कनैया को दी थी। बाद में उस ककडी को कनैयाने गोप बालको पर उडायी (फेंकी) और गोप बालको ने ककडी खाई थी।

हे भक्तों ! इस लीला को श्रीहरिजीने उत्सव के रूप मे परिवर्तित किया, प्रतिवर्ष आनेवाली भाद्र शुक्ल एकादशी के दिन 'जलझीलणी' नामक उत्सव करने का प्रारंभ किया। श्रीहरिवर प्रत्येक वर्ष बालमुकुन्द लालजी को नदी अथवा जलाशय में ले जाते, नौका में बिराजीत कर नौका विहार कराते और लालजी की पांच आरती करके ककडी (खीरा) अर्पण करते थे, तत्पश्चात् ककडी को संतो–भक्तो पर उडाते और सब लोग ककडी का प्रसाद ग्रहण करते।

हे भक्तों ! इस परंपरा के अनुसार एक बार भाद्र मास में जब श्रीहरिजी वडताल में उपस्थित थे तब श्रीहरि बालमुकुन्द लालजी को लेकर ताडण तालाब पधारे। इस प्रसंग का वर्णन श्रीहरिलीलामृत में किया है उसे देखते है।

"आवी झीलणी त्यां एकादशी, वृषनंदनने मन वसी ।
सारी रीते सजी असवारी, गया टाडणसर गिरधारी ॥
कर्युं मज्जन तेमा उमंगे, जळकेळी करी सखा संगे ।"
– श्रीहरिलीलामृत क.७, वि.४८

हे भक्तों ! इसके अलावा ताडण तालाब का दूसरा इतिहास यह है कि, वडताल में सर्वप्रथम छपिया–अयोध्या से धर्मकुल परिवार का आगमन हुआ, तब श्रीहरिवर स्वागत करने के लिए मंदिर से चलकर ताडण तालाब तक आए और परिवार को मिले। इस कारण से भी ताडण तालाब दोगुना प्रसादीभूत है; इसलिए यह स्थान दर्शनीय है।

(२०) धना तालाब - चंदन तलावडी (छोटा तालाब)

"भलो मास भादरवो आव्यो, चंद्र हस्त नक्षत्रे सुहाव्यो ।
उपाकर्म किया करवाने, शोधी ऐकांत श्री भगवाने ॥
तेवुं जाणियुं धना तळाव, गया त्यां मनमोहन माव ।"
–श्रीहरिलीलामृत क.७, वि.४८

हे भक्तों ! हिन्दु धर्म में चार वेद है। ऋग्वेद, यजुर्वेद, अथर्ववेद, तथा सामवेद। इसमे सें जिनका सामवेद है, ऐसे संत और ब्राह्मण गण भाद्र शुक्ल तृतीया के दिन यज्ञोपवित बदलते है। शेष ब्राह्मण गण श्रावणी पूर्णिमा अर्थात् 'रक्षाबंधन' के दिन यज्ञोपवित बदलते है।

हे भक्तों ! उपरोक्त पंक्ति के अनुसार श्रीजी महाराज भाद्र मास में वडताल में बिराजमान थे। यहा उपाकर्म (यज्ञोपवित बदलना) करने के लिए एकान्त स्थान का अन्वेषण कर । श्रीहरि ने धना तालाब (चन्दन तलावडी) को पसंद किया। क्योकि, धर्मदेव का वेद 'सामवेद' है और श्रीहरिजी धर्मदेव के पुत्ररूप में प्रकट हुए थे। इसलिए प्रभुजी ने यज्ञोपवित बदलने की विधि संपन्न करने के लिए धना तालाब पर पधारे। इसी तालाब में भी श्रीहरिजी ने संतो के साथे अनेकबार स्नान किया है।

हे भक्तों ! यहा पर एकबार जोबनपगीने श्रीहरिजी और संतो को भोजन कराया था। इस स्थल पर संतो ने स्वयं भोजन पकाया, उसमें सें प्रथम श्रीहरिजी ने भोग अर्पण किया और बाद में संतो ने प्रभुजीका प्रसाद पाया ।

हे भक्तों ! एकबार श्रीहरिजी स्वयं बैंल गाडी (शकट) लेकर, उसमे सद्.श्री मुक्तानन्द स्वामी तथा अन्य सद्गुरुओ को बैठाकर धना तालाब लें आए और संतो को स्नान कराया। एकबार श्रीहरिजी मंदिर से करध्वनि के साथ धुन करते हुए, संतो को साथ में लेकर, चलते – चलते धना तालाब आए थे और दोपहर तक संतो से कीर्तन भक्ति कराई। श्रीहरिजी संतो के साथ जलक्रीडा करके पुन: मंदिर पधारे। इसलिए धना तालाब भी दर्शनीय और स्नान करने योग्य प्रासादीक तीर्थस्थान है। अत: यहा स्नानार्थ एवं दर्शनार्थ अवश्य जाना चाहिए। यह धना तालाब, ताडण तालाब से पश्चिम की ओर थोडा दूर आया हुआ है।

"धन्य धन्य ते धना तळाव, ना'या जे विषे नटवर नाव ।
जळ केरी करी सखा संगे, कोरां वस्त्रो धर्या पछी अंगे ॥"
– श्री हरिलीलामृत क.७, वि.४७

(२१) गंगाजलिया कुआँ

गंगाजलिया कुआँ

हे भक्तों ! प्रसादीभूत नदी और कुएं के बीच अधिक अन्तर होता है। श्रीहरिजी ने अनेक बार छोटी--बडी नदी में स्नान किया है। ग्रीष्मऋतु की वेला में नदी का नीर सूख जाता है, इसलिए केवल नदी प्रसादीभूत कहलाती है; लेकिन वर्षाऋतु में बारिश होने के कारण पुनः नदी में नीर समाविष्ट हो जाता है ; अतः नदी को प्रसादीभूत समझकर भक्त-संत गण स्नान करते है। लेकिन वास्तविक तौर से देखे तो यह नीर प्रसादीभूत नही है, केवल नदी ही प्रसादीभूत है; किन्तु प्रसादीभूत कुएं में ऐसा नही है। प्रसादिक कुएं में यदि जल समाप्त न हुआ हो तो वे कुआँ और उसमे स्थित प्राकृतिक जल ये दोनो प्रसादीभूत है, अतः जिस प्रसादीभूत नदी का जल सूख गया हो ऐसी प्रासादीक नदी की तुलना में, प्रसादीभूत जल जिस कुएं में विद्यमान है, उस कुएं मे स्नान करना श्रेष्ठ है, क्योंकि वे जल को प्रगट प्रभुजी का सम्बन्ध आनुपर्वीरूप से है।

हे भक्तों ! दो सौ साल पूर्व श्रीहरिजीने जिस कुएं के जल से स्नान किया है, ऐसा प्रसादीभूत जल वर्तमान समय में, जिस कुएं मे विद्यमान है; उनमे से एक है 'गंगाजलिया कुआँ'। आज दिन पर्यन्त इसमे ऐसा ही प्रसादीभूत जल उपलब्ध है।

हे भक्तों ! मंदिर में स्थित सभामंडप के पीछे यह गंगाजलिया कुआँ विद्यमान है। जब मंदिर में पानी की कोई व्यवस्था नही थी, तब वहाँ से पानी की पूर्ति होती थी। वि.सं.१८६९ में 'ओगणोतेरा काल' (भयंकर अनावृष्टि) के समय गंगाजलिया मे पानी, एक घट डूबजाय इतना ही शेष बचा था; जिससे सभी संत चिंतित होने लगे।

हे भक्तों ! उसी समय श्रीहरिजी गढपुर से वडताल पधारे और इस स्थान पर बिराजमान हुए थे। संतोने इस कुएं में से जल निकालकर प्रभुजी को स्नान कराया। पश्चात् निकट में आये हुए बळियादेव की डेरी के पास श्रीहरिजी ध्यानस्थ मुद्रा में बैठे। तत्क्षण कुएं में से सहसा जलस्त्रोत स्फुटीत हुआ और कुए में से पानी बाहर निकल आया, बाद में फिर सामान्य स्थिति में स्थिर हो गया।

हे भक्तों ! इस घटना के बारे में पूछने पर श्रीहरिजी ने कहा कि, ''मेरा संकल्प जानकर कुएं में साक्षात् गंगाजी प्रगट हुए इसलिए आज से इसका नाम 'गंगाजलीया कुआँ' रखते है।'' यह कुआँ अति प्रसादीक है।

(२२) ज्ञान कूप

''चोकमां ज्ञानकूप छे जेह, महाराजे खोदाव्यो छे तेह ।
भाई रामदासे निज हाथ, नवराव्या कूपोदके नाथ ॥
चरणामृत ते बधु लई, ज्ञानकूपमां नाखियुं जई ।
धन्य धन्य कहु ज्ञानकूप, ए तो उत्तम तीर्थ अनूप ॥''
– श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१५

हे भक्तों ! भगवान श्री स्वामिनारायण ने जहाँ शिक्षापत्री ग्रंथ का लेखन कार्य किया है, ऐसे ''श्रीहरि मंडप'' के उत्तर की ओर, मंदिर के पीछे, चौक में स्वयं श्रीहरिजी ने कुआँ खूदवाया था और इसी स्थान पर कईबार ज्ञानोपदेश दिया था। अतः इसका नाम ''ज्ञानकूप'' है।

हे भक्तों ! उद्धवावतार सद्.श्री रामानन्द स्वामी के प्रथम दीक्षित संत 'श्री भाई रामदासजीने' निज हाथो से ही ज्ञानकूप में से जल निकालकर श्रीहरिवर को स्नान कराया था। स्वामी ने यह चरणामृत को एक पात्र में लेकर ज्ञानकूप में डाला। इसी कारण 'ज्ञानकूप' तीर्थरूप हो गया; अतः ज्ञानकूप का प्रेम-भाव से दर्शन करना चाहिए।

(२३) सुंदर पगी का कुआँ

"पगी जोबनना बारीमांय, बहुनामी बिराजीने त्यांय ।
रंग खेल कर्यो सखा संगे, पछी नावाने चाल्या उमंगे ॥
पगी सुंदरनो कूवो ज्यांय, विचर्या वृषनंदन त्यांय ।
नाह्या थाळामां बेसीने नाथ, गाय कीर्तन मुनिजन साथ ॥
कृपानाथे कोरां वस्त्र धर्यां, रंगवाळां थाळामां उतार्यां ।
हरिभक्तोए थाळानुं पाणी, नाख्युं कूपमां प्रसादी जाणी ॥"

- श्रीहरिलीलामृत क.७, वि.४०

हे भक्तों एकबार श्रीहरिजी महाराज गढपुर में फूलदोलोत्सव मना कर वडताल पधारे । यहां आकर जोबनपगी के भवन में निवास किया। श्रीहरिजी वडताल पधार रहे है ऐसा संदेश सुनकर चरोतर प्रांतस्थ गांव के निवासी हरिभक्त वडताल आने लगे।

हे भक्तों ! सभी की इच्छा रंगोत्सव करने की थी । इसलिए जोबन भक्त ने रंग सुसज्ज कर रखा था। जोबनपगी की विनंती से फाल्गुन वदि रंग सप्तमी के दिन, सुबह प्रभुजी जोबनपगी के भवन की खिडकी पर बिराजीत हो गये और चौक में उपस्थित समस्त संतो-भक्तो पर अबीर-गुलाल उडा कर, रंग की पिचकारी से रंग की धूम मचाई।

हे भक्तों ! रंगोत्सव करके गीले वस्त्र में ही श्रीहरिजी, संतो-भक्तो के साथ जोबनपगी के भाई सुंदरपगी के खेत में आये; और कुएं के थाले में बैठकर स्नान किया । उस वक्त संतो ने कीर्तन भक्ति करके महाराज को प्रसन्न किया था ।

हे भक्तों ! स्नान करने के बाद नये वस्त्र पहने और गीले वस्त्रो को सुंदरपगी के लिए थाले में ही रख दिया। प्रगट परब्रह्म ने स्नान किया हुआ प्रासादीक जल लेकर हरिभक्तो ने कुंए में डालकर, कुए को प्रसादीभूत किया।

हे भक्तों ! यह सुंदर पगी का प्रासादीक कुआँ वडताल रेल्वे स्टेशन से उत्तर की ओर निकट में ही है। वह प्रसादी का थाला आज भी दर्शनार्थ रखा गया है। इस स्थल पर स्मृति के लिए ओटे का निर्माण किया है। अतः इस स्थान में दर्शनार्थ अवश्य जाना चाहिए।

हे भक्तों ! वडताल की सीमा में बहुत सारे कुएं प्रसादी के हैं। वहा श्रीहरिजी महाराजने स्नान किया है। उसका परिचय संक्षिप्त में दे रहा हूं।

"शावजी कूवो छे वळी सारो, करता प्रभु त्यां तो उतारो ।
पछी त्यांथी सजी असवारी, आवता वरताल मुरारी ॥
एक कर्णा पगी तणो कूवो, बीजो अंटोळ दासनो जूवो ।
त्रीजो जंडियो जे कहेवाय, फाजीवाळो ते चोथो गणाय ॥
तेने बोरडीवाळो कहे छे, कूवा सर्वे प्रसादीना ए छे ।"

- श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१९

(२४) प्रसादी के खोडियार माताजी

"रुडी सोनारकुई जे कही, त्यांथी दक्षिणमां जुओ सही ।
खरी माता छे त्यां खोडियार, तहां विचर्या छे धर्मकुमार ॥
रंग उत्सव गाममां करी, घोडे बेसी पधारीया हरि ।
पगी जोबन आदिक मित्र, हता साथे ते परम पवित्र ॥
छांट्य जै खोडियारने रंग, कर्यु रंगमां रसबस अंग ।
तेथी भक्त थई ते तो देवी, तेनी वात सुणो कहुं केवी ॥"
– श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१९

हे भक्तों ! मंदिर से पूर्व की ओर दो कि.मी. दूर 'सोनार कुई' है । वहाँ से दक्षिण की ओर जोबनपगी की कुलदेवी 'खोडियार माताजी' का छोटा सा स्थानक है। यहाँ पर भी श्रीहरिजी अनेकबार पधारे है।

एकबार भव्य रंगोत्सव करके रंगवाले वस्त्रसहित श्रीहरिजी संतो-भक्तो के साथ जोबनपगी के खेत में पधारे । वहाँ माताजी को देखकर जोबनपगी ने महाराज से कहा, "प्रभुजी ! यह हमारी कुलदेवी खोडियार माता है ।" तब प्रभुजी ने कहा, "जोबन भक्त ! आज हम इस माताजी को सत्संगी करते है ।" इस प्रकार कहकर महाराज ने माताजी पर अपने दो हस्त रखे और रंग से सने हुए वस्त्रो में से रंग निचोड कर माता के उपर छिडका और प्रसादी के रंग से स्नान कराया ! इस प्रकार खोडियार देवी सत्संगी (भक्त) हुई।

हे भक्तों ! कुछ समय के बाद एक निषाद ने मन्नत की कि, "यदि यह मेरी इच्छा पूर्ण होगी तो मैं माता के आगे पशु की बली अर्पण करुंगा ! " इस प्रकार मन्नत करके रात में सो गया । तब रात में उसे स्वप्न आया, स्वप्न में खोडियार माता आकर कहने लगे, "अरे निषाद भक्त ! सुन । मैं अब भगवान श्री स्वामिनारायण की भक्त हुई हुं ; क्योंकि श्रीहरिजी मुझ पर रंग छींट कर सत्संगी कर चुके है । इसलिए अब यदि तुम मेरे सन्मुख पशुओ की हत्या करके, मुझे अपर्ण करोगे तो मैं तेरा सत्यानाश कर दूंगी।

"हवे हिंसा करे मुज पासे, तेनुं काढीश हुं सत्यानाश ।
ईच्छा एवी देवी तणी जोई, तहां हिंसा करे नहि कोई ॥"
– श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१९

(२५) ज्ञानबाग - बैठक

"ज्ञानबागमां आमलो सारो, जोई संते कर्यो तो उतारो ।
तहां हिंडोळो एक बंधाव्यो, भाळतां भक्त सर्वने भाव्यो ॥
संते विनंती करी हरि पास, अहो नाथ अजर अविनाश ।
कृष्ण जन्म समो थाय ज्यारे, त्यारे आवी अमारी उतारे ॥
हिंडोळामां झुलो हरिराय, पुरो एवी अमारी ईच्छाय ।
सुणी श्रीहरिए मानी वात, पछी ज्यारे गई अर्ध रात ॥
ज्ञानबागे आव्या गिरिधारी, झूल्या हिंडोळे विश्वविहारी ।
सौए हिंडोळामां तेह वार, दीठो अकळित तेज अंबार ॥
जाणे ए ज छे अक्षरधाम, देखे ते रीते लोक तमाम ।
तेजमां दिसे मूर्ति अनूप, पुरुषोत्तम प्रगट स्वरूप ॥"
श्रीहरिलीलामृत क.७, वि.४८

हे भक्तों ! मंदिर से पूर्व की ओर एक कि.मी. दूर ज्ञानबाग है । वहाँ श्रीहरिवर ने अनेक उत्सव किए है । उसमे से एक जन्माष्टमी उत्सव को आपके समक्ष प्रस्तुत करते है।

हे भक्तों ! श्रीहरिजी गढपुर से जन्माष्टमी का उत्सव करने के लिए वडताल पधारे थे। श्रीहरिजी तब नारायणगिरि के मठ में रहते थे और वासण सुतार के घर भोजन के लिए जाते। संतो का आवास ज्ञानबाग में था। जन्माष्टमी का दिन आया, संतोने ज्ञानबाग मे एक बडे इमली के वृक्ष पर सुंदर झुला बांधा। श्रीहरिजी को श्रीकृष्ण प्रागट्य के वक्त बुलाया तब प्रभुजी वहाँ पधारे और झुले पर बिराजमान हो कर झुलने लगे।

हे भक्तों ! जन्माष्टमी की अर्ध रात्री हुई तब वहा उपस्थित संतो-भक्तो ने झूले में बिराजमान श्रीहरिजी को शीतल प्रकाश से देदीप्यमान देखा ! और साथ ही शीतलधन तेज को विस्तृत होते हुए भी देखा, माने की साक्षात् मूर्तिमान अक्षरधाम ही क्यो न हो ? ! पश्चात् उस तेजपुंज के मध्य मे श्रीहरिजी का दिव्यरूप मे दर्शन हुआ ! और आकाश से पुष्पवृष्टि होने लगी । जिसका दर्शन सभी ने अपनी आँखों से किया।

हे भक्तों ! इस प्रकार प्रगट परब्रह्म श्रीहरिजी के ऐश्वर्य - सामर्थ्य से सब लोग परिचित हुए। पश्चात् सभी संत झुले के चारो तरफ गरबी का गान करते हुए; रास क्रीडा करने लगे और साथ मे रात्री जागरण भी किया। इसलिए श्रीहरिजी संतो पर अति प्रसन्न हुए।

(२६) द्वादश द्वार के झुलेपर झुले

"हे नृप आवी हुताशनी, तेह वासरनी कहु वात ।
बनी शोभा ज्ञानबागमां, धाम अक्षर सम साक्षात् ॥
छे आज छत्री जे स्थळे, एथी अग्नि दिशा मोझार ।
उत्तम बे आंबा हता, एक एक तणे अनुसार ॥
मोभ मुक्यो ते उपरे, हेते बांध्यो हिंडोळो त्यांय ।
निष्कुळानंदे नेहथी, तेनी रची हती रचनाय ॥"
– श्रीहरिलीलामृत क.७, वि.५९

हे भक्तों ! ज्ञानबाग में हुतासनी के उत्सव पर भव्य समैये का आयोजन हुआ। संत-भक्त सब शीध्रता से तैयारी करने में जुट गये। सद्गुरु श्री निष्कुलानन्द स्वामीने तो अद्भूत द्वादश द्वार का झुला सुन्दर कलाकृति से निर्माण किया। इस झुले को दो आम्रवृक्ष की शाखा के मध्य में काष्ठ का क्षैतिज मेंड रखकर बांधा गया।

हे भक्तों ! पश्चात् सद्.श्री निष्कुलानन्द स्वामी श्रीहरिजी को आमंत्रित करने जोबनपगी के घर आए। "महाराज ! आप के लिए सुंदर झुला बांध के सुसज्ज किया है; इसलिए आप वहाँ पधारकर दर्शन दीजिए सभी संत-भक्त गण आपके दर्शन की प्रतिक्षा कर रहे है।" स्वामीश्री की विनंती सुनकर महाराज शीध्रता से तैयार हो गये और गाजे बाजे के साथ भव्य शोभायात्रा में बिराजीत होकर ज्ञानबाग पधारे और झुले पर बिराजमान हुए। उसी समय चिदानन्द स्वामी ने नोबत का नाद किया, नाद सुनकर हरिभक्तों के संघ शीध्रता से श्रीहरि के दर्शनार्थ आने लगे।

हे भक्तों ! तत्पश्चात् सुरत, बडौदा, अहमदाबाद ईत्यादी प्रदेशो में से भक्तगण आने लगे। सभी ने महाराज का पूजन किया और श्री मुक्तानन्द स्वामीने झुले की हीरडोर हाथ में लेकर श्रीहरिवर को झुलाने लगे और संतो ने झुले का कीर्तन गान किया।

हे भक्तों ! उसी समय में श्रीहरिजी द्वादश द्वार के झुले पर बिराजमान हुए और द्वादश स्वरूप धारण करके सहस्त्राधिक भक्तो के प्रेम-भाव स्वीकारते हुए, अपना दिव्य दर्शन देकर, पूजा अंगीकार कर रहे थे। यह प्रसादीभूत झुला वर्तमान समय में वडताल अक्षरभुवन में दर्शन के लिए रखा गया है।

(२७) ज्ञानबाग में भव्य रंगोत्सव

"पुष्पदोल तहां ज बंधावी, नरनारायण पधरावी ।
डाह्यो मे'तो नाथा वनमाळी, भणेला बेय ब्राह्मण भाळी ॥
महाराजे कह्युं द्विज आवो, बदरीशनी पूजा करावो ।
एना उत्सवनो दिन आज, कर्यो तैयार छे सर्व साज ॥"
– श्रीहरिलीलामृत क.७, वि.६०

हे भक्तों ! पुष्पदोलोत्सव यानि बद्रिकाश्रम में प्रगट हुए श्री नरनारायणदेव का प्राकट्य दिन। फाल्गुन वदी (कृष्ण पक्ष) प्रतिपदा का दिन था, श्रीहरिजी ने पुष्प से सुशोभित झुले में श्री नरनारायणदेव की मूर्ति बिराजीत कर, ब्राह्मणो के पास अर्चन-पूजनादिक करवाया; और स्वयं नरवीर प्रभु को झुलाया।

हे भक्तों ! यहा संतो-भक्तो ने दो भव्य रंग कुंड, रंग से भरकर सुसज्ज किए थे। पूर्व कुंड का नाम 'संतकुंड' था और पश्चिम कुंड का 'हरिकुंड'। भक्त जोबनपगी और नारायणगिरि ने १४०० पिचकारियाँ तैयार करवाई थी ! और अबीर-गुलाल की अनेक गाडियाँ भरकर मंगवाया था।

हे भक्तों ! रंग क्रीडा करने की संपूर्ण तैय्यारियाँ हो गई तब संत महाराज को ले आए। जोबनपगीने श्रीहरिजी को सुवर्ण की पिचकारी हाथ में दी। फिर अग्रगण्य भक्तो ने महाराज का पूजन किया और पुष्प से सुशोभित झुले पर श्रीहरिजी को बिराजीत किया, तत्पश्चात् सद्.श्री मुक्तानन्द स्वामीने आरती उतारी।

हे भक्तों ! बाद में संतगण श्रीहरिजी को रंगकुंड पर ले आये और रंगक्रीडा प्रारंभ करने कि विनंती की। तब श्रीहरिवर हरिकुंड की ओर उपस्थित होकर, पिचकारी को रंग सें भरकर संतो पर रंग डालने लगे। इसलिए संतकुंड पर उपस्थित संतोने भी पिचकारी भरकर श्रीहरिजी के उपर रंग डाला। इस प्रकार सभी आपस में रंग क्रीडा करने लगे।

"छोळ्य रंगनी उछळे एवी, महामेघनी धाराओ जेवी ।
अन्यो अन्य उडाडे गुलाल, दीसे अवनी ने आकाश लाल ॥
रम्या एवी रीते घणी वार, पछी बोलिया प्राण आधार ।
हवे बे बे तणी थाओ जोड, करो खेल धरी मनकोड ॥"
– श्रीहरिलीलामृत क.७, वि.६१

हे भक्तों ! इस उत्सव में इतने सारे सत्संगी आए थे कि, वडताल गाँव शहर जैसा प्रतीत होने लगा था। हरिलीलामृत में इस प्रसंग का विस्तार पूर्वक वर्णन किया है।

(२८) वडताल मंदिर खातमुहूर्त

“वितयो समैयो जे समे, सहु संघ गया निज गाम ।
भक्त मळी वडतालना, कहे प्रभुने करीने प्रणाम ॥
हे प्रभु आपे कह्युं हतुं, वडुं मंदिर थशे वरताल ।
आवशुं चैतर मासमां, करावशुं आदर ते काळ ॥
करो आदर करुणानिधि, पाळो वचन विश्वाधार ।
श्यामे ते विनंती सांभळी, कर्यो मंदिर करवा विचार ॥”

– श्रीहरिलीलामृत क.८, वि.६

हे भक्तों ! वि.सं.१८७८ में श्रीहरिजी चैत्री समैया करने के लिए वडताल पधारे थे। समैये में हजारो हरिभक्त एकत्रित हुए थे। समैये की पूर्णाहूति हुई, तब वडताल के अग्रगणी भक्त जोबनपगी, बापुभाई, वासण सुथार, और नारायणगिरि इत्यादिक एक साथ मिलकर महाराज के पास आए और विनंती पूर्वक कहने लगे, “हे प्रभो ! आपका वडताल में भव्य मंदिर निर्माण करने का संकल्प था, इसलिए अब मंदिर निर्मान का खातमुहूर्त कीजिए।”

हे भक्तों ! वि.सं.१८७२ मे श्रीहरिजी जब वडताल पधारे थे तब स्वयं श्रीहरिजी के कहने पर भक्तो ने मंदिर के लिए पौना चार बिघा (०.६५ हेक्टर) (१.६० एकर) जमीन भेट – अर्पण की थी। तब प्रभुजी ने कहा था कि, “इस भूमी पर भव्य मंदिर का निर्माण होगा, जिससे हजारो नर–नारि सुखपूर्वक आत्मकल्याण कर सके।” वही बात सभी भक्तों ने श्रीहरिजी को याद दिलाई।

हे भक्तों ! वडताल के भक्तो की तीव्र इच्छा देखकर, श्रीहरिजीने केरीयावी गांव के गोविंदराम जोषी के पास शिलारोपण विधि का शुभ मुहूर्त निकलवाया। जोषीने देखकर ‘चैत्र शुक्ल त्रयोदशी’ का शुभ मुहूर्त निकाला।

हे भक्तों ! जिनके हाथो से यह संपूर्ण विश्व की नींव रखी गई है, ऐसे विश्वेश्वर भगवान श्री स्वामिनारायण के करकमलो से वि.सं.१८७८ चैत्र शुक्ल १३ के शुभ दिन, प्रातः काल में, वेदोक्त विधि से, इस मंदिर का शिलोरोपण पांच ईंटे रखकर हुआ। इस प्रसंग में सद्.श्री मुक्तानन्द स्वामी, सद्.श्री गोपालानन्द स्वामी इत्यादिक बडे – बडे सद्गुरु तथा वडताल एवं संप्रदाय के अग्रगण्य भक्त भी उपस्थित रहे थे।

(२९) सद्‌गुरु श्री ब्रह्मानन्द स्वामी का आगमन

हे भक्तों ! खात मुहूर्त करने के पश्चात् श्रीहरिवर गढपुर पधारे। एक दिन सभा में महाराज बोले कि, ''वडताल में मंदिर निर्माण के लिए किसे भेजें ?'' तब सद्.श्री मुक्तानन्द स्वामीने सद्.श्री ब्रह्मानन्द स्वामी का नाम सुझाया। इसलिए महाराज ने स्वामीश्री को उनके मंडल सहित वडताल भेजा और मंदिर निर्माण कार्य के लिए बारह रूपिये हरजी ठक्कर से दिलवाए । सहायता के लिए साथ में श्री आनंदानन्द स्वामी और श्री अक्षरानन्द स्वामी को भी भेजा।

हे भक्तों ! श्रीहरिजी की आज्ञा शिरोधार्य कर सब वडताल आए और वडेउ माता की धर्मशाला में निज आवास किया। पश्चात् सद्.श्री ब्रह्मानन्द स्वामीने सत्संग के अग्रगण्य भक्तो को बुलाकर कहा कि, ''श्रीजी महाराज की आज्ञा से हम मंदिर निर्माण कार्य करने के लिए आए है।'' बापुभाई, जोबनपगी, नारायणगिरि और वासण सुथारादिक भक्त ने कहा, ''स्वामी ! हमारा सर्वस्व महाराज के लिए कृष्णार्पण है अत: आप जिस प्रकार कहेंगे वैसे हम करेंगे।''

हे भक्तों ! वर्तमान समय मे विद्यमान ज्ञानबाग से निकट, नौ लाख ईंटे बनाने के नौ भठ्ठे बनवाए थे ! (बाद में एक लाख ईंटे अधिक बनाई थी) गढपुर से वडताल आते वक्त श्रीहरिजीने स्वामीजी को कहा था कि, ''वडताल में जैसा घेला हनुमानजी का मंदिर है, वैसे मंदिर का निर्माण करना है।'' लेकिन स्वामीश्रीने तो भव्य मंदिर निर्माण करने का द्रढ संकल्प किया था, इसलिए गहरी नींव करके नौं लाख ईंटे समाविष्ट की !

हे भक्तों ! गढपुर में बिराजमान श्रीहरिजी को इस बात का संदेश मिला। उसी वक्त एक पत्र लिखकर पार्षद को वडताल भेजा। यहां आकर पार्षदने सद्.श्री ब्रह्मानन्द स्वामी को पत्र दिया। स्वामी पत्र को खोलकर पढने लगे। पत्र में श्रीहरिजीने लिखा था कि,

''आपकी पहोंच बिचार के, करीये तेती दोड ।
ऐता पाव पसारीये, जेती लंबी सोड ॥''

हे भक्तों ! पत्र को पढकर स्वामीने उसके उत्तर में दुसरा पत्र लिखा और पार्षद को देकर गढपुर जाने की अनुमति दी। गढपुर आकर पार्षदने पत्र महाराज को दिया। महाराज पत्र खोलकर बांचने लगे। पत्र में लिखा था कि,

''साहेब सरीखा शेठीया, बसे नगरकी मांय ।
ताको धनकी क्या कमी ? ज्याकी हूंडी चले नवखंडमाय ॥''

हे भक्तों ! पत्र सुनकर जीवुबा बोली कि, ''हे महाराज, स्वामी की इच्छा भव्य मंदिर करने कि है तो आप करने दीजिए।'' तब प्रभुजी बोले कि, ''अब तो मंदिर संपूर्ण हो जायेगा, क्योंकि लक्ष्मीजी ने अनुमति दे दी है।''

(३०) श्रीहरिजी ३७ ईंटे शीर पर लाये

''श्रीजी पंडे जई ईंटो लावे, अन्यने जोई उमंग आवे । मुख्य देवना मंदिर काज, लाव्या पंडे ईंटो महाराज ॥
गणी संते ते तो साडत्रीश, पडधीमां चणी पांतरीश । एक गोखलो छे पछवाडे, छांदी बे तो तेमां तेह दाडे ॥''
– श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१४

हे भक्तों ! श्रीहरिजी की ओर से भव्य मंदिर निर्माण करने कि अनुमति मिल गई, इसलिए सद्. श्री ब्रह्मानन्द स्वामी ने पूरे उत्साह के साथ भव्य मंदिर का कार्य शुरु किया। कुछ दिनो के बाद श्रीहरिजी वडताल पधारे, तब श्रीहरिजी को प्रसन्न करने हेतु सब उत्साह से सेवा करने लगे।

हे भक्तों ! एक दिन श्रीहरिजी ज्ञानबाग के पास ईंट के भठ्ठे पर गए और स्वयं अपनी पाघ पर ईंटे रखकर मंदिर ला रहे थे, तब मार्ग में संतो-भक्तो ने ईंटे लेने का प्रयास किया किन्तु श्रीहरिजी ने ईंटे किसी को नहीं दी और मंदिर तक ले आये। इस प्रकार दिन में अनेकबार ईंटे शीर पर उठाकर मंदिर लाये थे। संतो ने ये सभी ईंटो की गिनती की तो सैंतीस थी। उसमे से पैंतीस ईंटे से विदिका (जहा पर श्रीनारायण भगवान प्रतिष्ठित है वह स्थान) बनाई गई है और दो ईंटे मंदिर के पीछे ताक (आला) में रखी गई है।

हे भक्तों ! ईंट भठ्ठे से श्रीहरिजी के साथ सद्.श्री नित्यानन्द स्वामी और सद्.श्री ब्रह्मानन्द स्वामी इत्यादि ने भी ईंटे सिर पर रखकर लाई थी। ऐसा द्रश्य देखकर बडे-बडे धनवान सत्संगी भी निर्मानी होकर ईंटे सिर पर लाने लगे।

हे भक्तों ! इस प्रकार वडताल गांव के और श्रीहरिजी के दर्शनार्थ आये हुए अन्य गांव, प्रान्त, प्रदेश के भाई – बहन भी मंदिर की सेवा करने लगे। सेवा करते हुए भक्तो को देखकर श्रीहरिजी अति प्रसन्न होकर आशीर्वाद देते थे। तथा संतो को सेवा करते हुए देखकर श्रीहरिजी गले लगाते थे।

''थाय मंदिरनो परथार, कामे लागीया संत अपार । कोई संत तो त्यां ईंटो चांपे, कोई गारो भरी भरी आपे ॥
थाय गाराळां वस्त्र ने अंग, तोय भक्ति कर्यानो उमंग । जोई रीझे ते करुणा निधान, भुजा भीडी भेटे भगवान ॥
कोई संत कहे जोडी हाथ, गारो धोउं पछी मळो नाथ । कहे कृष्ण रीझ्युं मन मारुं, नहि गारो ते चंदन धारुं ॥
गारो वळग्यो हशे जेने अंग, हुं तो तेने ज भेटुं उमंगे । एवा शब्द ज्यां श्यामे सुणाव्या, गारो चोपडीने कैक आव्या ॥
सौने भेटी बोल्या भगवान, मने वालुं घणुं निरमान । निरमानी थई जन जेह, नीची टेल करे घणी तेह ॥
तेने थाउ प्रसन्न हुं जेवो, कोटि नाणां थकी नहि तेवो । माटे कीधां छे में आवां धाम, तेमां करशे आवी रीते काम ॥
वळी ज्यां ज्यां जग्या मारी थाशे, तहां आ रीते भक्ति कराशे । दिव्यरूपे हुं तेह देखीश, तेनुं फळ तेवुं तेने आपीश ॥''
– श्रीहरिलीलामृत क.८, वि.५३

(३१) श्री लक्ष्मीनारायणदेव की मूर्तिया ले आये

“मूर्तिओनुं ज्यां चालतुं काम, तहां जोवा गया घनश्याम ।
नारायणभाई साथे हिराजी, करता हता मूर्तियो ताजी ॥
छबिओनी छबी जोई सारी, बहु रीझ्या रूदे गिरिधारी ।
भेट्या बे जनने भीडी बाथ, मावे बेने माथे मुक्या हाथ ॥
अक्षरानंद बोलिया वाणी, स्नेहे सांभळो सारंगपाणी ।
मूर्ति लक्ष्मीनारायण केरी, नथी मळती अमे बहु हेरी ॥
हसी बोलीया अंतरजामी, पोते सर्वज्ञ संतना स्वामी ।
मूर्तियो महा दैवत वाळी, रमा नाथ रमानी रुपाळी ॥
अति पावन छे पुरातनी, मनवृत्ति हरे हरिजननी ।
ते तो छे वटपत्तन मांय, मोटा संतने मोकलो त्यांय ॥”

– श्रीहरिलीलामृत क.८, वि.११

श्री लक्ष्मीनारायण देव - वडतालधाम

हे भक्तों ! वडताल में मूर्ति बनाने का काम भूज के (जूनागढ के) ‘नारायणजी भाई’ और अहमदाबाद के ‘हीराभाई’ सलाट (मूर्ति बनाने वाले शिल्पी) कर रहे थे। वहा श्रीहरिजी पधारे और मूर्तिओ को देखकर दोनो पर अति प्रसन्न होकर गले लगाया और दोनो हाथ शिर पर रखकर आशीर्वाद दिए। उस वक्त श्री अक्षरानन्द स्वामीने कहा कि, “हे महाराज ! श्री लक्ष्मीनारायणदेव की मूर्ति आपने जैसी बताई थी वह हमने सब जगह ढुंडी पर कही नहीं मिली।”

हे भक्तों ! तब मंद हास्य करते हुए श्रीहरिजी ने कहा, “स्वामी ! मूर्तिया तो सुंदर है और तैयार भी है। अति पवित्र है और दैवतसंपन्न भी है। पुरातनीय है और मनोहर है। वे मूर्तिया इस समय बडौदा में अमीचंद नामक वणिक के घर में बिराजीत है। इसलिए मुक्तानन्द स्वामी और नित्यानन्द स्वामी मूर्ति लेने प्रस्थान करे, ऐसा आप दोनो संतो को संदेश दीजिए। वन–विचरण के दौरान हम अमीचंद के घर गये थे तब मूर्तिया देखी थी।

हे भक्तों ! श्रीहरिजी की आज्ञा शिरोधार्य कर दोनो संत बडौदा गये। और वणिक से मूर्तियों के लिए आग्रह किया परन्तु उसे साफ मना कर दिया। इस प्रकार शुरू मे अनेक कठिनाईयो का सामना करना पडा। तब श्रीहरिवर को मनोमन मदद के लिए प्रार्थना की जिसे सुनकर श्रीहरिजी ने अमीचंद की बुद्धि को निर्मल किया; परिणामत: श्री लक्ष्मीनारायण की दोनों मूर्तिया संतो को प्रदान की। संत वह मूर्ति को गढपुर ले जाना चाहते थे; इसलिए बैंलगाडी गढपुर के मार्ग पर आगे बढने लगी !

हे भक्तों ! यदि श्रीहरिजी श्री लक्ष्मीनारायण की मूर्ति को गढपुर ले जाने देते, तो फिर श्री लक्ष्मीजी का वरदान कैसे फलीभूत होता ? ‘कलियुग में परब्रह्म प्रकट होंगे, और तपश्चर्या स्थली पर हम दोनो कि मूर्तिया प्रतिष्ठित करेंगे और दुसरा कारण यह भी है कि, वडताल का मंदिर तैयार हो चुका था और गढपुर में मंदिर निर्माण करने की अब तक बात ही नही हुई थी। इसी कारण श्रीहरिजी की इच्छा मूर्ति गढपुर ले जाने में नही थी। अत: मार्ग में ग्रीष्मऋतु होने पर भी अनराधार वृष्टि हुई। मार्ग में कीचड होने लगा इसलिए गाडी आगे नही चल सकी !

हे भक्तों ! दोनो संत बडी विपत्ति का सामना करते हुए बोचासण गाँव आए। वहा भक्त काशीदासभाई के घर मूर्ति रखी और वहाँ से चलते चलते वडताल पहुंचे। यहा आकर देखा तो बारिश की एक बूंद भी नही थी। श्रीहरिजी से दोनो संत मिले और अपना वृत्तांत सुनाकर क्षमायाचना की। कुछ दिनों बाद बोचासण जाकर श्री लक्ष्मीनारायण की दोनो मूर्तिया वडताल लेकर आये।

(३२) प्रभुजी ने पुतलो को नचाया

"तहां बोलिया मस्तक नामी, अक्षरानंद आनंद स्वामी ।
नारायण मोल नीचेनो भाग, तहां ओरडो ओपे अथाग ॥
पुतळां हीराभक्ते बनाव्यां, तेतो ते ओरडामां मुकाव्यां ।"
- श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१५, कडी.५०

हे भक्तों ! मंदिर के निर्माण कार्य के साथ साथ हनुमानजी की मूर्ति का निर्माण कार्य भी चल रहा था। उस वक्त श्रीहरिजी निरिक्षण करने के लिए पधारे । तब आनंदानन्द स्वामी तथा अक्षरानन्द स्वामी ने कहा, "महाराज ! नारायण महल के नीचे एक खण्ड है, उसमें हीरा भक्त ने पूतले बनाकर रखे है, उसे देखने के लिए आप पधारे।"

हे भक्तों ! संतो की विनंती सुनकर श्रीहरिजी वहाँ गये और पुतलो को देखकर श्रीजी महाराज बोले कि, "अरे ! ऐसा लग रहा है कि यह बोल रहे हैं !!! इनमे बस जीव नहीं है अति सुंदर बने है।" श्रीहरिजी की ऐसी बाणी सुनकर यतिराज, श्रीहरि के सखा सद्. श्री ब्रह्मानन्द स्वामी बोल उठे कि,

"आंहि जो कोई ईश्वर आवे, तो आ पुतळामां प्राण लावे ।
मांसना पुतळाने रमाडे, केम पथ्थरनां न जीवाडे ॥
पण जो करुणा उर आणे, एवी लीला देखाडे आ टाणे ।
एवां सांभळी मर्म वचन, मंद मंद हस्या भगवान ॥
हती नेतरनी छडी हाथे, पुतळांने अडाडी ते नाथे ।
जीवतां थई नाचवां लाग्यां, वाजां विविध प्रकारनां वाग्यां ॥
सुणी जोवा आव्या घणा जन, थया निरखीने मनमां मगन ।"
-श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१५

हे भक्तों ! स्वामी को नृत्य करते हुए पुतले देखने की इच्छा थी, इसलिए मर्म में बोले, "पूतले तो सुंदर ही है किन्तु भगवान के सिवा इन्हें कौन जीवित कर सकता है ? यहाँ कोई भगवान थोडी है, हो तो पुतलों में प्राण डाल कर नचाए। भगवान चाहे मांस के पुतले में अथवा पथ्थर के पुतले में प्राण पूरे; दोनो समान ही है। अतः यहा यदि प्रभु हो तो दया करके पुतले को जीवित करे और लीला दिखाए।"

हे भक्तों ! सद्. श्री ब्रह्मानन्द स्वामी का मर्मवाचक वचन सुनकर, श्रीहरिजी स्मित हास्य करते हुए, उनके हाथ में जो 'नेतर' की छडी थी। उनसे एक के बाद एक पूतले का स्पर्श किया, इतने में तो चमत्कार के साथ साक्षात्कार भी हुआ। सभी पुतले नृत्य करने लगे ! जिस के हाथ में जो वाद्ययंत्र थे वह बजाने लगे ! यह ध्वनी सुनकर सेवा में रत संत भक्त शीध्रता से आकर आश्चर्य के साथ देखने लगे। बाद में श्रीहरिजी ने अपनी छडी खिंच ली जिससे पुतले यथावत् स्थिति में हो गये।

हे भक्तों ! ये सभी पुतले वर्तमान में मंदिर के अंदर स्थम्भ पर, वर्तुलाकार घुंमट की चारो ओर स्थित है। इसे देखकर सभी संत-भक्त २०० वर्ष पुराने यह प्रसंग की स्मृति करते हुए अपने को धन्यभागी महसूस करते है। तथा पूतले को जिस नेतर की छडी से स्पर्श किया था; वह वर्तमान में अक्षरभूवन में है।

(३३) श्री नारायण के आयुध सही हुए !

"नित्याख्य नामे मुनिये ज आवी , तहां प्रभुने विनंती सुणावी ।
जे मूर्तियो छे पधराववानी, जुओ प्रभु द्रष्टि करी कृपानी ॥
पछी पधार्या प्रभु तेह संगे, जोवा बधी मूरतियो उमंगे ॥
ईशान कोणे शुभ बूर्ज ज्यांय, जोई जईने हरि मूर्ति त्यांय ।
ज्यां वस्त्र आछादित दूर कीधुं, स्वरूप नारायण जोई लीधुं ॥
आयुध हाथे अवळां हतां जे, जोतां जणायां सवळां थयां ते ।
नीचे तणा दक्षिण हाथमांय, गदा थई चक्र हतुं ज त्यांय ॥
डाबे करे जेह गदा जणाती, त्यां चक्र दीठुं भलु ए ज भाती ।"

– श्रीहरिलीलामृत क.८, वि.२३, कडी – ६१-६४

हे भक्तों ! सद्.श्री मुक्तानन्द स्वामी और सद्.श्री नित्यानन्द स्वामी बडौदा से श्री लक्ष्मीनारायण देव की मूर्ति ला रहे थे , मार्ग में अनराधार वर्षा होने से बोचासण में काशीदास भाई के घर रखी थी। कुछ दिनो के बाद मूर्ति वडताल लाई गयी तब सद्.श्री नित्यानन्द स्वामीने श्रीहरिजी से कहा, 'प्रभो ! आप बुर्ज के नीचे एक खण्ड में स्थित श्री लक्ष्मीनारायण देव की मूर्ति देखने के लिए पधारे।'

हे भक्तों ! विनंती सुनकर श्रीहरिवर मूर्तिओ को देखते हुए श्री लक्ष्मीनारायण देव के पास आए मूर्ति एक बडे वस्त्र सें आच्छादित थी। श्रीहरिजी ने जब आच्छादित वस्त्र को ले लिया, उसी वक्त श्री नारायण के आयुध जो विपरीत थे वे सही हो गये !!! दाईं ओर नीचे के हाथ में चक्र था वहा गदा हो गई ! और बाई ओर नीचे के हाथ में गदा थी वहा चक्र हो गया !

हे भक्तों ! श्रीहरिजी ने नित्यानन्द स्वामी से कहा, आप तो कह रहे थे कि, 'श्री नारायण के आयुध विपरीत है,' परंतु सभी आयुध सही तो है।" तब बद्धांजलि पूर्वक स्वामी ने कहा, "हे महाराज ! श्री नारायण के आयुध विपरीत ही थे, परंतु आपकी संकल्प शक्ति – कृपादृष्टि से सही हो गये है।" ऐसा सुनकर श्रीहरिजी [illegible] मंद हसने लगे। पश्चात् स्वामीने कहा :–

"कहे मुनि मूर्ति बीजी निहाळो, देखाव केवो दरसे रूपाळो ।
ते मूर्तियो त्यां सघळी निहाळी, कह्युं कृपाळे बहु छे रूपाळी ॥"
"हरिवर वरतालमां पधारी, निज मुरती नजरे निहाळी सारी ।
जन मन हर सौम्य मूर्ति जेह, मुज मन मांहि वसो सदैव तेह ॥"

– श्रीहरिलीलामृत क.८, वि.२३, कडी.७१-७२

(३४) अठारह मूर्तिओ की प्रतिष्ठा

"आव्यो पछी ज्यां दिन द्वादशीनो, प्यारो घणो ते कमळापतिनो ।
उठी प्रभाते करि नित्य कर्म, अग्न्यादि पूजा करि धर्मवर्म ॥
त्यां मूर्तियोने हरि आप हाथे, कर्यो अभिषेक द्विजोनी साथे ।
पूजा करी वेदऋचा भणावी, ते मूर्तियोने रथमां चडावी ॥"

– श्रीहरिलीलामृत क.८, वि.२८

हे भक्तों ! वि.सं.१८८१ कार्तिक शुक्ल द्वादशी, बुधवार के दिन ब्राह्ममूहूर्त में उठकर श्रीहरिजीने अपनी नित्यविधि संपन्न की और प्रतिष्ठा के निमित्त नारायण महल के आगे यज्ञशाला में पधारे। वहाँ स्थित सभी मूर्तिओ का ब्राह्मणो के साथ रहकर अभिषेक किया। बाद में ब्राह्मणो ने वैदिक मंत्रोच्चार किया और सभी मूर्तिओ को रथ में विराजित किया।

हे भक्तों ! उस रथ के आगे वादक गण वाद्य बजाते हुए चलने लगे और उनके पीछे ब्राह्मण गण वेदऋचा का उच्चारण करते हुए चलने लगे और तत्पश्चात् शेष मूर्तिओ को लेकर स्वयं श्रीहरिजी रथ में बैठकर मंदिर की प्रदक्षिणा करके पूर्वद्वार पर आ गये।

हे भक्तों ! तत्पश्चात् सभी मूर्तिओ को मंदिर में निर्धारित स्थान पर स्थापित किया। श्री लक्ष्मीनारायणदेव की मूर्ति को मध्य शिखर के मध्य खंड में स्थापित किया। दक्षिण खंड में श्री राधाकृष्णदेव के साथ अपना उपास्य स्वरूप श्रीहरिकृष्ण महाराज स्थापित किया और उत्तर खंड में धर्मदेव, भक्ति माता के साथ वासुदेव (श्रीहरिजी का बाल स्वरूप) की मूर्ति स्थापित किया।

हे भक्तों ! अन्य छोटे-छोटे 'छह' शिखरो में छोटे-छोटे खंड में श्रीवराहनारायण, श्री नृसिंहनारायण, श्री शेषशायी, श्री कुर्मनारायण, श्री सूर्यनारायण और श्री मत्स्यनारायण की मूर्तिओ को स्थापित किया।

(३५) श्रीहरिजी ने ग्यारह रूप धारण किए !!!

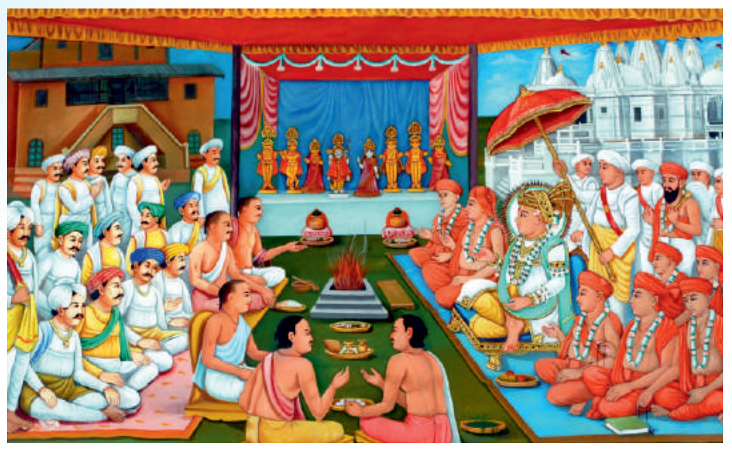

"संवत अठार शते तथा शुभ साल एकाशी तणी ।
कार्तिकी सुदी तिथि द्वादशी उत्तम थकी उत्तम घणी ॥
बुधवार सौथी सार ने नक्षत्र निरमळ ते कहुं ।
भलुं भाद्रपद जे उत्तरा वळि योग हर्षण शुभ बहु ॥
धन लग्नमां दिन प्रहर चडतां काम ते उत्तम कर्युं ।
आश्चर्यकारी ए समे त्यां रूप धर्म सुते धर्युं ॥
स्थापन करण थळ जेटलां हरि तेटलां रूपो धरी ।
सहु मूर्तिओनी एक काळे त्यां प्रतिष्ठा तो करी ॥"

– श्रीहरिलीलामृत क.८, वि.२८ कडी. १६-१७

हे भक्तों ! वि.सं.१८८१ कार्तिक शुक्ल द्वादशी, बुधवार (तारीख : ३/११/१८२४) के उत्तरा भाद्रपद नक्षत्र में, धन राशी में, प्रातःकाल के प्रथम प्रहर में (६ से ९ के बीच) भगवान श्री स्वामिनारायण ने एक साथ ग्यारह स्वरूप धारण करके ग्यारह स्थानो में एककालावच्छिन्न मूर्तिओ की प्राणप्रतिष्ठा करके आरती की !

हे भक्तों ! ३ शिखर के खंडो में तीन रूप धारण करके आठ स्वरूपो की आरती की। ६ छोटे - छोटे शिखर के खंडो में छह देवो के सन्मुख छह रूप धारण करके आरती की और श्री गणपतिजी तथा श्री हनुमानजी के २ स्थानो में दो रूप धारण करके चार देवो की आरती की। क्योंकि श्री गणपति की मूर्ति के साथ ही शिव-पार्वतीजी की मूर्ति उर्ध्व भाग में सम्मिलित है।

हे भक्तों ! जब श्रीहरिजी महाराज एक साथ ग्यारह स्वरूप धारण करके अठारह देवो की प्रतिष्ठा की आरती कर रहे थे, तब अनेक प्रकार के वाद्य की ध्वानि गुंजने लगी। दरबार (क्षत्रिय) भक्तो और पार्षद भक्तो ने एक साथ बंदूक की आवाज की। आकाश में देवो के वृन्द आकर पुष्पवृष्टि करने लगे। गंधर्वो के वृन्द गान करने लगे और संत भक्त उच्चस्वर सें आरती का गान कर रहे थे।

हे भक्तों ! तत्पश्चात् संतोने सभी देवो की स्तुति करके, दंडवत् प्रणाम करके, जय-जयकार किया "श्री लक्ष्मीनारायण देव की जय ...., श्रीहरिकृष्ण महाराज की जय ...., श्री राधाकृष्ण देव की जय ...., श्री धर्मभक्ति वासुदेव की जय जय जय ...."

श्री वासुदेव और श्री हरिकृष्ण की एकता

"ते मांहि मूर्ति वळि वासुदेव, तथा हरिकृष्ण तणी अभेव ।
अे बेयमां भेद कशो न जाणो, प्रत्यक्ष मारी मुरती प्रमाणो ॥
तेमां रही हुं सुख सर्व दैश, पूजा करे ते पण मानि लैश ।
ए मूर्ति द्वारे अगणीत केरुं, कल्याण थाशे जगमां घणेरुं ॥
प्रत्यक्ष देखे मुजने न जेह, ते मूर्तिनुं ध्यान करे ज तेह ।
जो मानसी पूजन तेनुं थाय, प्रत्यक्ष पूजा सम छे सदाय ॥"

– श्रीहरिलीलामृत क.८, वि.३०

हे भक्तों ! प्राणप्रतिष्ठा की आरती करके श्रीहरिजी यज्ञशाला में पधारे और पूर्णाहुति का श्रीफल यज्ञ में आहुत किया। पश्चात् संतो-भक्तो के साथ वाद्य बजाते हुए अवभृथ स्नानार्थ (यज्ञ की पूर्णाहुति निमित्त स्नान) गोमती सरोवर गये। स्नान करके सभा में बिराजमान हुए और ताली बजाकर, हाथ उठाकर कहने लगे। "हे संतो - भक्तो आप सभी एकाग्रचित्त होकर सुनिए। मैंने प्रतिष्ठित किये हुए 'वासुदेव' और 'हरिकृष्ण' ये दोनो मेरे ही स्वरूप है, इसलिए दोनो में किसी भी प्रकार का भेद नही है। दोनो स्वरूप का प्रत्यक्षभाव से सेवा-पूजा करने सें साक्षात् मैं उनकी सेवा-पूजा अंगीकार करुंगा।

हे मेरे आश्रितो ! मुझे ये दोनो मूर्ति के द्वारा अगणित मुमुक्षुओ का मोक्ष करना है। जब हम प्रत्यक्ष मनुष्याकार में नही होंगे तब यह मेरे दोनो स्वरूप की जो मनुष्य उपासना, ध्यान, मानसी पूजा ईत्यादि जो भी करेंगे उनकी सेवा-पूजा को हम प्रत्यक्षरूप से स्वीकार करेंगे, इसलिए मेरे दोनो स्वरूप मे मैं ही साक्षात् हुं, ऐसा समझना।

हे भक्तों ! वडताल मंदिर के उत्तर खंड में श्री धर्म,भक्ति और वासुदेव तथा दक्षिण खंड मे श्री हरिकृष्ण महाराज, श्री कृष्ण और राधाजी इस प्रकार कुल छह पंचधातु की मूर्तिका निर्माण कार्य बडौदा में हुआ है। ऐसा ‘श्री हरिचरित्रामृत सागर ’ ग्रंथ में आधारानन्द स्वामी लिखते है।

एक बार गढपुर में श्रीहरिजीने आधारानन्द स्वामी को बुलाकर कहा “स्वामी ! आप बडौदा प्रस्थान करे। वहा धर्म और भक्ति दोनो की मूर्ति तथा मुरलीधर श्री कृष्ण की (वृंदावन विहारी की) राधिका सहित मूर्ति पंचधातु से निर्माण कराई।” पश्चात् आधारानन्द स्वामी केशवानन्द स्वामी को साथ लेकर बडौदा आये और चार मूर्ति वडतालधाम के लिए और बनवाई। (पूर. २८/ त.९६)

हे भक्तों ! भगवान श्री स्वामिनारायण ने स्वयं जिस स्वरूप की महिमा कही है तथा अपने आश्रितो को उपासना - ध्यान करने हेतु ही श्रीहरिकृष्ण महाराज तथा श्री वासुदेव नारायण को प्रदत्त किए है। वह पंचधातु स्वरूप का निर्माण बडौदा में ही हुआ है। इसका श्रीहरिचरित्रामृत सागर प्रमाण है।

एक बार भूज के नारायणजी भाई सुतार को श्रीहरिजी ने आज्ञा की, “आप बडौदा जाकर हमारी दो मूर्ति बनाकर लाए।” अतः दोनो मूर्ति का निर्माण कराके वडताल आए (लाए)। भक्त मनोरथ पूरणकाम ऐसी एक मूर्ति का नाम ‘श्री वासुदेव नारायण ’ था और दूसरी मूर्ति का नाम ‘श्रीहरिकृष्ण महाराज’ था। दोनो स्वरूप एक जैसे सुशोभित थे। (पूर. २७, त.१३)

(३७) श्री हरिकृष्ण महाराज प्रत्यक्ष है

“अमारा हे इष्ट प्रगट हरिकृष्ण प्रभु तमे,
सदा द्यो स्वाभीष्ट तव पद तणा आश्रित अमे।
अनेक ब्रह्मांड स्थिति लय तणा कारण अहो,
अमारे चित्ते आ मुरती रजनी वासर रहो ॥”
- श्रीहरिलीलामृत क.८, वि.२८

हे भक्तों ! प्रतिष्ठा भव्यता एवं दिव्यता से संपन्न हुई। सारे संत श्रीहरिकृष्ण महाराज की स्तुति करते हुए कहते है कि, “हे प्रभो ! आप हमारे ईष्टदेव है। हम आपके चरणकमल के सेवक है। आप को जो प्रिय है वह हमे प्रदान करिए। हे महाराज ! आप तो अनंतकोटि ब्रह्मांड की उत्पत्ति, स्थित, और प्रलय के कर्ता है। आपकी महिमा हम क्या कह सके ? इसलिए हमारी इतनी अरजी है कि, यह आपकी मूर्ति हमारे हृदय में हंमेशा के लिए विराजीत रहे और निरंतर हमारा चित आपका ही चिंतन करता रहे।”

हे भक्तों ! एक बार श्रीहरिजी मुक्तानन्द स्वामी को साथ में लेकर मंदिर दर्शन करने गये। सभी देवो के दर्शन करते हुए श्रीहरिकृष्ण महाराज के पास आकर कहा, “स्वामी ! यह मेरा स्वरूप है, इसमें और आपके सामने जो मनुष्याकार में उपस्थित हमारे स्वरूप में तथा अक्षरधाम में विराजमान हमारा दिव्य स्वरूप है; यह तीनो में एक रोम का भी भेद नही है। जो भेद मानेगा उनके निश्चय में भेद है और कल्याण में भी भेद है ऐसा आप माने (समझे)।”

हे भक्तों ! इस प्रकार कहकर श्रीहरिजी श्रीहरिकृष्ण महाराज की मूर्ति मे लीन हो गये !!! बहुत अधिक समय तक रह कर, जब बाहर न निकले तब मुक्तानन्द स्वामी गद्‌गद् होकर स्तुति करने लगे तब बाहर निकले और बोले कि, “स्वामी ! आपको हमारे तीनो स्वरूप की एकता का दर्शन कराया है।” ऐसा सुनकर स्वामी अतिप्रसन्न हुए।

हे भक्तों ! श्रीहरिजी मनुष्य देह का परित्याग करके अक्षरधाम में पधारे उसके बाद श्री रामप्रतापजी भाई अहमदाबाद से कार्तिकी और चैत्री समैये पर जब-जब वडताल आते थे तब मंदिर में श्रीहरिकृष्ण महाराज के सन्मुख ढोलक बजाकर एक चित होकर सतत कीर्तन भक्ति करते थे। तब प्रसन्न होकर श्रीहरिकृष्ण महाराज मूर्ति में से प्रत्यक्ष बाहर निकलकर कहते थे कि, “बडेभैया ! कीर्तन भक्ति बहुत हुई अब आवास की तैयारीयाँ कीजिए।” ऐसे कहकर गले लगाते थे। तब बडे भाई निवास करते थे। ऐसे हमे प्रत्यक्ष परब्रह्म की प्राप्ति हुई है।

"प्रगट मूर्तिनो महिमाय...अचरजकारी छे ।
सर्वे सुखतणी सीमाय...अचरजकारी छे ॥
आ मूर्तिनी जे मोटाई ...अचरजकारी छे ।
नावे नावे कह्यामांई ...अचरजकारी छे ॥
आ मूर्ति सहुथी न्यारी ...अचरजकारी छे ।
शुं हुं कहुं वडाई विस्तारी...अचरजकारी छे ॥
आ मूर्ति सहुथी नोखी...अचरजकारी छे ।
चोक्स वात कहुं छुं चोख्खी ...अचरजकारी छे ॥
आ मूर्ति नहि अन्य जेवी...अचरजकारी छे ।
हरि धरी न धरशे एवी...अचरजकारी छे ॥
आ मूर्ति छे अलौकी...अचरजकारी छे ।
मानो मान मननुं मूकी...अचरजकारी छे ॥
आ मूर्ति नही कोय सरखी...अचरजकारी छे ।
जूवो अंतर उंडुं नीरखी...अचरजकारी छे ॥
आ मूर्तिनो महिमाय ...अचरजकारी छे ।
कोटि कविये केम कहेवाय...अचरजकारी छे ॥
एवी मूर्ति छे आजनी...अचरजकारी छे ।
हरिजनना सुख साजनी...अचरजकारी छे ॥
सहुने पार आव्या छे पोते...अचरजकारी छे ।
जन सुखिया थाय सहु जोते...अचरजकारी छे ॥"

– हरिस्मृतिः चिंतामणी – ७

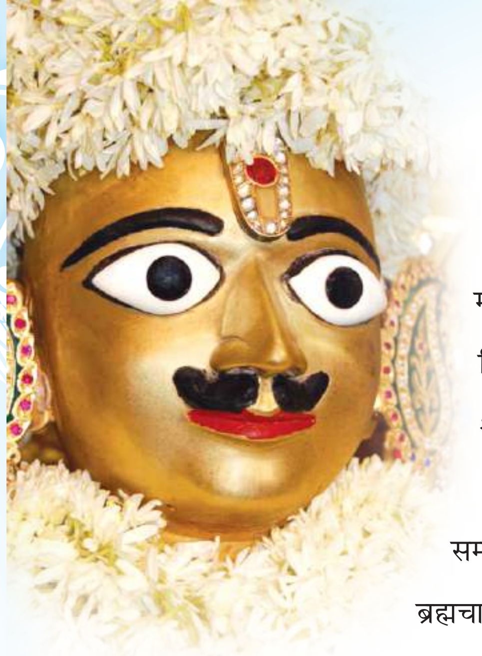

(३८) श्रीहरिकृष्ण महाराज बोले कि ...

हे भक्तों ! भगवान श्री स्वामिनारायण जब मानवरूप में इस पृथ्वी पर प्रकट थे, तब उनकी सेवा में श्री मूलजी ब्रह्मचारी एवं श्री जयराम ब्रह्मचारी रहते थे। कालान्तर में जब १८८६ में श्रीहरिजीने स्वधाम गमन किया तब जयराम ब्रह्मचारीजी वडताल आ गए और श्रीहरिकृष्ण महाराज की सेवा करने लगे परंतु मानवरूप श्रीहरिजी अंतर्धान होने से वह बहूत ही उद्विग्न रहते, प्रतिदिन उदासी छाई रहती ।

एकदिन ब्रह्मचारीजी अपने निवास में उदास बैठे थे तब श्रीहरिजी की याद आने से रोने लगे। उसी समय वहाँ लक्ष्मीजी ने प्रगट होकर कहा कि, "ब्रह्मचारी ! मेरे साथ मंदिर पर चलो। ऐसा कहकर श्री लक्ष्मीजी; ब्रह्मचारी को श्री हरिकृष्ण महाराज के सन्मुख ले गए और कहा कि श्रीहरिजी स्वधाम पधारे है, ऐसा आप मानते है। किन्तु वह आज भी श्रीहरिकृष्ण महाराज के स्वरूप में रहकर समग्र संप्रदाय के आश्रितों को नित्य दर्शन प्रदान कर रहे है। क्या आप इस स्वरुप को मूर्ति मानते है ?"

हे भक्तों ! श्री लक्ष्मीजीने ऐसा कहा तभी श्री हरिकृष्ण महाराज बोले – जयराम ब्रह्मचारी ! लक्ष्मीजी सच बोलती है। हम तो सिर्फ मानवरूप से अंतर्धान हुए है परंतु श्रीहरिकृष्ण स्वरूप से अखंड दर्शन देते है। अतः हमको प्रत्यक्ष मानकर सेवा करना।

इस प्रकार कहकर श्री हरिकृष्ण महाराज मौन हो गए। उक्त दिव्य वाणी का श्रवण करके श्री जयराम ब्रह्मचारी की अश्रुधारा बहने लगी। इसी समय श्री लक्ष्मीजी श्री हरिकृष्ण महाराज के सम्मुख से मध्य खंड में जहाँ अपनी मूर्ति है, वहाँ जाकर उस में समाहित हो गए।

हे भक्तों ! इस प्रसंग के बाद ब्रह्मचारीजी अतिशय प्रसन्न रहने लगे और श्री हरिकृष्ण महाराज के साथ – साथ सभी देवो को प्रत्यक्ष मानकर सेवा करने लगे और सभी को यह लक्ष्मीजीने दर्शन दान करके जो श्रीहरिकृष्ण महाराज का महिमा कहां था वह बताया।

हे भक्तों ! हम लोग भी यदि जयराम ब्रह्मचारी की तरह; श्रीहरिजी को अक्षरधाम गमन हुए मानेंगे तो अंतर में आनंद नही होगा, किन्तु श्री लक्ष्मीजी की तरह प्रत्यक्ष मानेंगे; तो अंतर में अहो अहो भाव रहेगा और श्रीहरिकृष्ण महाराज की महिमा का ज्ञान होगा अतः महिमा सहित प्रत्यक्षभाव से श्रीहरिकृष्ण महाराज का दर्शन करना चाहिए। तब दर्शन में विशिष्ट आनंद प्राप्त होगा।

(३९) प्रासादिक देव महिमा

"आ मंदिरे स्थापित रूप जेह, छे पूजवा जोग्य समस्त तेह ।
अे तो सहु छे अवतार मारा, अर्च्या थकी वांछित आपनारा ॥
आ लक्ष्मीनारायण रूप जे छे, श्री द्वारिकाधीश स्वरुप ते छे ।
इत्यादि मारा अवतार जाणी, पूजो धरो ध्यान उमंग आणी ॥
में मूर्तियो स्थापित जेह स्थाने, जे तेहने आदरथी न माने ।
न जाणवो आश्रित ते अमारो, ते तो मरीने नरके जनारो ॥
प्रत्येक मासे तिथि पूर्णिमांये, जो आ स्थळे नियमथी अवाये ।
आ देवना दर्शन अेह टाणे, कर्या थकी सिद्धि अभिष्ट माणे ॥"
– श्रीहरिलीलामृत क.८, वि.३०

हे भक्तों ! प्रतिष्ठा के बाद विशाल सभा में श्रीहरिजी सभी संतो भक्तो को कहने लगे, "इस वडताल मंदिर में मैंने मेरे स्वरूप के साथ, मेरे अवतार स्वरूपो की स्थापना की है। ये सब पूजनीय एवं सेवनीय है। उनके पूजन से मनोरथ पूर्ण होंगे।

हे भक्तजनो ! यह श्री लक्ष्मीनारायण देव; वही द्वारकाधीश है, ऐसा मानना। इस देव का दर्शन पूजन करने से द्वारकाधीश के दर्शन पूजन का भी फल प्राप्त होगा। यह वैंकुठपति एवं द्वारिकापति; दोनो है। अतः इन देवो को एवं छोटे देवघर में प्रस्थापित मेरे अवतार स्वरूपों की महिमा से सेवा करना। मेरे द्वारा प्रतिष्ठित मूर्तिओ को जो आदरपूर्वक मानता नही है, वह मेरा आश्रित ही नही हैं। और उनकी निंदा करने से तो नरक में जायेगा। अतः मेरे अवतारो की कभी भी निंदा नही करना।

"पौर्णमास्यां पौर्णमास्यां ये च ग्रामान्तरादपि ।
अेत्यैषां दर्शनं भकत्या करिष्यन्त्यत्र मानवा ॥"
– सत्संगिजीवन : ४/२७/५८

हे संतो – भक्तों ! ऐहिक सुखके लिए जो जो नरनारी, हर महीने पूर्णिमा के दिन दर्शन के लिए आएँगे और कोई संकल्प लेगा; उनका मनोरथ जरुर पूर्ण होगा। श्रीहरिकृष्ण महाराज उनको मुक्ति प्रदान करेंगे और श्री लक्ष्मीनारायण देव उनको भुक्ति प्रदान करेंगे। अतः मोक्षार्थी एवं भौतिक सुखार्थी; दोनो को प्रतिमास पूर्णिमा के अवसर पर दर्शनार्थ जरूर आना चाहिए।

(४०) श्री लक्ष्मीजीने स्वयं ब्रह्मचारी को खडा किया।

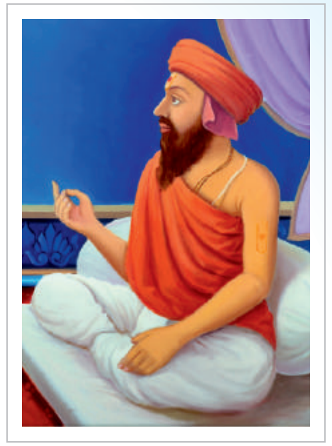

हे भक्तजनो ! श्री स्वामिनारायण भगवानने वडताल में प्रतिष्ठित किए श्री लक्ष्मीनारायण देव सदा सर्वदा प्रगट है। उसकी आपको प्रतिति हो, इसलिए एक प्रसंग लिखता हूँ जिसे एकाग्र मन से पढने पर आपको ज्ञान होगा कि अपने मंदिर के देव कैसे चमत्कारी एवं दयालु है।

हे भक्तों ! श्रीहरिकृष्ण महाराज एवं श्री लक्ष्मीनारायण आदि देवो के पूजारी के तौर पर सेवा ; मूलजी ब्रह्मचारी के शिष्य नारायणानंदजी ने कई वर्षो तक की, बाद में बडी उमर की वजह से सेवानिवृत्त हुए; तथापि देवदर्शन के लिए प्रतिदिन जाते थे। एकदिन वह नित्य नियमानुसार दर्शन करने के लिए गए। दर्शन करके आहिस्ता आहिस्ता चलकर अपने निवास पर जा रहे थे। तब उम्र और बिमारी की वजह से चक्कर आए और गिर पडे।

हे भक्तों ! उस वक्त वहाँ कोई संत या भक्त गण नही थे अतः ब्रह्मचारीजी वैसे ही भूमि पर पडे थे। तब वहा अचानक कोई अनजान स्त्री आई और ब्रह्मचारीजी का हाथ पकडकर खडा करने लगी; तब ब्रह्मचारीने सहसा आँख खोलकर के देखा, तो साक्षात् लक्ष्मीमाता थी। ब्रह्मचारीजी तो देखते ही रहे और हाथ छूडाने का प्रयास करने लगे, तब लक्ष्मीजी बोले ब्रह्मचारी मै तो आपकी माता हूँ, अतः मेरे स्पर्श से आपको उपवास नही आएगा। आपने श्रीहरिकृष्ण महाराज और हमारी बहुत ही महिमा से सेवा की है, आप गिर पडे ऐसा जानकर आपको खडा करने आई हुं। अब आपको दैहिक दुःख सहन नही करना पडेगा। कल भगवान श्री स्वामिनारायण आपको अपने धाममें ले जाएगें, तैयार रहना।

हे भक्तों ! ऐसा कहकर श्री लक्ष्मीजी अंतर्ध्यान हो गए और ब्रह्मचारीजी अपने आसन पर गये। अगले दिन श्रीजी महाराज; मूलजी ब्रह्मचारी इत्यादि मुक्तो को साथ में लेकर अक्षरधाम ले जाने के लिए आए, तब ब्रह्मचारीजीने अपने शिष्य निष्कामानंदजी को कहा, "महाराज एवं मुक्त; मुझे लेने आए है अतः आप सब धुन बोलिए, मैं अक्षरधाम जाता हुं।"

हे भक्तों ! उस वक्त ब्रह्मचारी आवास में तेज छा गया और उस तेज में श्रीजी महाराज एवं मुक्तों का दर्शन कई संतों–भक्तों को हुआ। प्रासादिक देवों की सेवा करने से उन्होंने मदद की और दूसरे दिन महाराज को लेने के लिए भेजा। अतः प्रासादिक देवों की सेवा करके श्रीहरिजी को प्रसन्न करना चाहिए।

श्रीहरिकृष्ण महाराजने सुवर्ण मुद्रीकाएं मांगी।

हे भक्तों ! मध्य प्रदेश के निमाड प्रान्त के धरगांव के गोविन्दभाई पटेल एक बार मन ही मन यह निश्चय कर निकले कि श्री हरिकृष्ण महाराज की मूर्ति मुझसे बोलकर मेरे पास से सोने की मोहरें मांगे'। तब वे वडताल आए और श्री हरिकृष्ण महाराज के दर्शन किए। तभी महाराज ने कहा "गोविन्द पटेल ! सोना मोहर लाओ !" अपना संकल्प पूर्ण हुआ जानकर उन्हें श्रीहरि का निश्चय अति द्रढ हो गया और उन्होंने वडताल वासी श्री हरिकृष्ण महाराज की आजीवन भक्ति की।

(४१) सूर्यनारायण वडताल पधारे ।

"अहो भानूदेवा प्रगट तम जेवा सुर नाहीं ।
सजे छे सौ सेवा अधिक सुख लेवा जन अहीं ॥
रथे राजो छोजी सुभग वळि समाश्व सहिते ।
रह्या छो श्रीविष्णु हिरणमय रूपे जनहिते ॥"
– श्रीहरिलीलामृत क.८, वि.२८

हे भक्तों ! जैसे द्वारिका से सच्चिदानंद स्वामी के साथ द्वारिकाधीश वडताल पधारे, वैसे ही बडौदा से श्री गोपालानंद स्वामी के साथ श्री सूर्यनारायण वडताल पधारे है ; वह प्रसंग आपके समक्ष कहता हुं।

हे भक्तों ! मूल अक्षरमूर्ति सद्‌गुरु श्री गोपालानंद स्वामी बारबार बडौदा आते जाते थे और सत्संगीओ को दर्शन एवं कथावार्ता का सुख प्रदान करके प्रसन्न करते थे । एकबार स्वामीजी "खारीवाव" मोहल्ले में पधारे । वहां दश-बारह सुरैया लुहार सत्संगी निवास करते थे । उन्होंने स्वामीजी की पधरामणी करवाई और १० शेर पेंडा-बरफी स्वामीजी के समक्ष रखा। स्वामीजीने पेंडा ठाकुरजी को भोग लगाया और पास में ही सूर्यनारायण का मंदिर था, वहां पेंडा का थाल (भोग) ले गए और सूर्यनारायण के समक्ष रखकर भोजन करने को कहां।

हे भक्तों ! तत्काल सूर्यदेव मूर्ति से बाहर आकर स्वामीजी के पास आए। तब स्वामीजीने पूछा, आप प्रसन्न तो है ना ? तब श्री सूर्यदेव बोले – दक्षिणी विप्र सेवा पूजा करता है, किन्तु धर्मपालन नहीं करता है और क्रियाशुद्धि भी नहीं पालता है ; अतः हम भोजन नही करते। किन्तु आपने पेंडा का नैवेद्य रखा है, वह जरुर खाउंगा। ऐसा कहकर आधा खा गये और बचा हुआ सबको प्रसाद देने के लिए कहा।

हे भक्तों ! फिर सूर्यदेवनें गोपालानंद स्वामी को कहां श्रीहरिजी वर्तमानकाल में पृथ्वी पर अवतार – धारण करके अनंत आत्माओं का कल्याण कर रहे है और निजाश्रीतो को दिव्य सुख प्रदान करते है। मैं भी उन्हीं सर्वोपरी भगवान का भक्त हुं, अतः मेरी इच्छा है कि मैं भी प्रभु के समीप में रहकर के, उनके दर्शन एवं सेवा कर्‌ु ? । तब स्वामीजीने कहां कि हम चार दिन बाद वडताल जाने वाले है और भगवान श्रीहरिजी भी गढपुर से वडताल; महोत्सव करने के लिए आनेवाले है। अतः आप ब्राह्मण के रूप में हमारे साथ वडताल आना।

हे भक्तों ! उसके बाद चौथे दिन स्वामीजी गाडी में बैठकर सूर्यदेव के मंदिर गए और बोले "चलो सूर्यदेव" तत्काल मूर्ति में से एक वृद्ध विप्र के रूप में बाहर आकर स्वामीजी के साथ गाडी में बैठकर वडताल आए और श्रीहरिजी को प्रणाम करकें समीप में रखने के लिए विनंती की । श्रीहरिजीने उनकी विनंती स्वीकार की । अतः वह श्रीजी महाराज के साथ मंदिर में गए और तेजोरुप होकर के सूर्यनारायण की मूर्ति में तेजोरुप में समाहित हो गए और वडताल में नित्य निवास करके रहने लगें।

(४२) द्वारकाधीश वडताल पधारे

"भूत भविष्यनी वारता, सर्व जाणे छे श्रीमहाराज ।
जाण्युं आवे छे द्वारिकापती, साथे तीर्थनो लईने समाज ॥"
– श्रीहरिलीलामृत क.८, वि.४३

हे भक्तों ! श्रीहरिजीने गोपालजी, नंदरामजी ईत्यादि धर्मकुल के साथ श्री सच्चिदानंद स्वामीजी को द्वारिका की यात्रा के लिए भेजा। वहां स्वामीजी के पास पैसा न होने से, उन्हें तप्त मुद्रा नहीं मिली जिससे गोमती स्नान और बेटद्वारका में दर्शन भी नहीं हो सका । अतः खिन्न मनवाले स्वामीजी ध्यान में बैठ गये और ध्यान से समाधी अवस्था में चले गए। इसलिए १० दिन कुछ भी खाये-पीये बिना व्यतीत हो गए ! इस से प्रसन्न होकर द्वारकाधीश ने स्वामीजी को दर्शन देकर गाढ आलिंगन किया और वरदान मांगने को कहां। तब स्वामीजी बोले, "स्त्री धन के त्यागी संत एवं गरीब भक्त भी आप का दर्शन सुख चैन से कर सके; ऐसी कृपा कीजिए। यहां के ब्राह्मण पैसे के बिना दर्शन करने नही देते।

हे भक्तों ! स्वामी की विनंति सुनकर श्री द्वारिकाधीश बोले, "मैं वडताल आउंगा। वहां श्री लक्ष्मीनारायणदेव की मूर्ति है उस में निवास करके सभी भक्तों को दर्शन दूंगा। अतः वडताल में श्रीनारायण के दर्शन करने से द्वारिका की यात्रा का पुण्य मिलेगा। मेरे इस वचन मे कोई संशय मत करना। क्योंकि में जहां हुं वहां ही द्वारिका है और द्वारिका के सभी तीर्थ है। हे स्वामी ! आप आज ही लौट जाओ। हम आपके साथ आ रहे है।"

हे भक्तों ! फिर स्वामीजीने गढपुर आकर के श्रीहरिजी को संपूर्ण वृत्तांत सुनाया। तब श्रीहरिजी ने कहां कि द्वारिकाधीश वडताल पधार रहे है, अतः पुष्पदोलोत्सव वडताल जाकर करना है। फिर श्रीजी महाराज वडताल पधारे और द्वारकाधीश भी वडताल आ कर के श्री लक्ष्मीनारायण देव की मूर्ति में नित्य निवास करने लगे !

(४३) “गोमतीजी का वडताल आगमन”

“पछी गोमती गाळवा केरुं, कृष्णे काम चलाव्युं घणेरुं ।
मटोडी तणी टोपली भरी, पोते पाघ उपर धरे हरी ॥
देखी देवता विस्मित थाय, एवी भक्ति ते करवा चहाय ।
मच्या संत ने भक्त हजारो, करे जयजयकार उच्चारो ॥”
– श्रीहरिलीलामृत क.८, वि.५३

हे भक्तों ! द्वारिकाधीश वडताल पधारे अतः उनके साथ गोमतीजी भी पधारी। इसलिए मंदिर से उत्तर दिशा में “धारुतलाव” था, श्रीहरिजीने उसे खुदाई करवा के और गहरा करवाया। यह तालाब गाँव के अग्रणी भक्तजनोने संवत् – १८७५ में श्रीहरिजी को भेंट किया था अर्थात् मंदिर को दान किया था।

हे भक्तों ! इस तीर्थ को विशेष तीर्थत्त्व प्रदान करने के लिए श्रीहरिजी अद्‌भूत लीला करते थे। जब इस तालाब को ओर गहरा किया जा रहा था तो स्वयं अपने शिर पर टोकरी उठाकर सेवा करते थे। प्रभुजी की इस प्रकार की सेवा देखकर के देवता भी आश्चर्यमुग्ध हो जाते। इस कार्य के लिए सैकडो संत-भक्तजन सेवा कार्य में जुटे थे, अतः अल्पकाल में ही गोमतीजी की खुदाई का काम समाप्त हो गया।

हे भक्तों ! संवत् – १८८२ फाल्गुन कृष्ण-१ प्रतिपदा के दिन श्रीहरिजी मंदिर से हजारो संत-सत्संगीजनो को लेकर धामधूम से गोमतीजी पधारे। गोमतीजी के पूर्वतट के समीप “कुए” की खुदाई हुई थी। वर्तमान में उस जगह पर लाल पत्थर का कूप है। वहां तैर कर के जा सकते है। एकबार श्रीहरिजी उस कूप पर खडे थे तब पार्षद भीमभाईको कहने लगे।

“तमे खणो आ स्थळ एक वार, थशे तहांथी जळ केरी धार ।
आज्ञा प्रमाणे कर्युं अेम ज्यारे, जोरेथी छूटी जळधार त्यारे ॥
देखाई त्यां गोमती मूर्तिमान, अत्यंत ते तेज तणुं निधान ।
गोपाळजी ने वळी नंदराम, मळी कर्युं पूजन तेह ठाम ॥”
– श्रीहरिलीलामृत क.८, वि.४४

हे भक्तों ! श्रीहरि के कथनानुसार भीमभाईने एक कुदाल लगाई, तब भूमि में से जलधारा प्रगट हुई। जलधारा मे मूर्तिमान “गोमतीजी” का दर्शन हुआ ! फिर विप्रोने वेदोक्त मंत्रो द्वारा गोपालजी एवं नंदराम से पूजा करवाई।

(४४) श्रीहरि कथित - गोमतीजी का माहात्म्य

“श्रीजी बिराज्या सर केरी पाळे, सिंहासने वेदि विषे विशाळे ।
बेठा समीपे सहु आवी दास, बोल्या प्रभु ते जन सर्व पास ॥
आव्या जुओ गोमती एह ठाम, तो गोमती आ सर केरुं नाम ।
जे आविने आ सरमां नहाशे, तो गोमती तीर्थनुं पुण्य थाशे ॥
संतो तथा ब्राह्मणने जमाडे, ते पूर्वना पाप बधां मटाडे ।
पुत्रादि पामे धन धान्य पामे, अंते वसे अक्षरनाम धामे ॥”
– श्रीहरिलीलामृत क.८, वि.४४

हे भक्तों ! गोमतीजी के पूजन के बाद श्रीहरि उसी के तट पर सभा को संबोधित करते हुए कहने लगे कि; “ हे संतो भक्तो ! सब सुनिए। इस धारु तालाब में द्वारका से गोमतीजी का आगमन हुआ है। अतः इस तालाब का नाम हम “गोमती सरोवर” रखते है। जो लोग यहाँ स्नान करेंगे उसे गोमती तीर्थ में स्नान का पुण्य प्राप्त होगा। इस तीर्थ में जो संत एवं विप्र भोजन करायेगा, उसके पूर्वजन्मकृत पाप भी नष्ट हो जायेगे। पुत्रार्थी पुत्र प्राप्त करेंगा, धनार्थी धन प्राप्त करेंगा, अतः गोमतीजी में अवश्य स्नान करना चाहिए।

हे भक्तों ! ‘श्रीहरिलीला कल्पतरु’ ग्रंथ में भी गोमतीजी का माहात्म्य कहा है। उसे संक्षिप्त में कहता हुं। इस गोमतीजी के जल में स्नान करने से; जिस में भूत प्रविष्ट थे, वो सब भूत प्रेत की उपाधि से मुक्त हो जाता है। इस गोमती तीर्थ में द्वारिका से सभी तीर्थ आकर निवास करते है। ऐसा आप निश्चित समझें और जो लोग इस गोमतीजी में स्नान करेंगे ; उनके सभी पाप नष्ट होगे और उनको सभी तीर्थस्थानो में स्नान का पुण्यफल प्राप्त होगा। यहाँ पर पितृतर्पण करने वाले के पूर्वजो को सद्‌गति प्राप्त होगी।

जो लोग गोमतीजी में “माघस्नान” करेंगे, उनके महापातक तत्काल नष्ट होगें। रविवार, अमावास्या, पूर्णिमा, सभी एकादशी, रामनवमी,जन्माष्टमी, शिवरात्री, अधिक मास तथा ग्रहण समय में जो गोमती स्नान करता है, उनके सर्वमनोरथ सिद्ध होते है।

(श्री हरिलीलाकल्पतरु – ९/३२/३३)

हे भक्तों ! इस गोमतीजी के तीन घाट का पथ्थर से निर्माण हुआ है, वह वडतालदेश गद्दी आचार्य परंपरा के तृतीय आचार्य प्रवर श्री विहारीलालजी महाराजने किया है।

(४५) “तप्तमुद्रा महिमा”

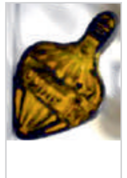

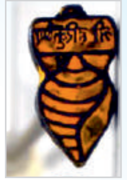

“वृताल द्वारामतिथी विशेष, छे लक्ष्मीनारायण द्वारिकेश ।
आ गोमती उत्तम तीर्थदेवी, आंही ज शंखादिक छाप लेवी ॥
जे तप्तमुद्रा अहिं आवि लेशे, दूरे करीने जमडा रहेशे ।
तेने ज सत्संगि गणीश मारो, माटे तमे सौ जन छाप धारो ॥
ज्यां द्वारिका गोमती तीर्थ ज्यां छे, छापो तणो तो अधिकार त्यां छे ।
जे मारी आज्ञा ज विशे रहेशे, ते आवीने छाप अहीं ज लेशे ॥
तेने ज हुं भक्त गणीश मारो, अे रीते बोल्या वृषनो दुलारो ।”

– श्रीहरिलीलामृत क.८, वि.४४

हे भक्तों ! श्रीहरिजी सभास्थित अपने आश्रितों को कहते है कि, “वडताल तीर्थ द्वारका से महान तीर्थधाम है। क्योंकि वैकुंठाधिपति श्री नारायण तो यहाँ थे ही और विशेषरूप से उसमें श्री द्वारकाधीश प्रविष्ट है। अत: यह तीर्थ सर्वोपरी है औरश्री द्वारिकाधीश के साथ गोमतीजी का भी आगमन हुआ है। अत: इस वडतालधाम में ही शंख-चक्र-गदा-पद्म; यह तप्तमुद्रा धारण करना चाहिए। जो व्यक्ति यहाँ आकर तप्तमुद्रा धारण करेगा; स्वयं यमदूत भी उससे डरकर दूर रहेंगे। जो यह तप्तमुद्रा लेगा उसी को हम सत्संगी मानेगें। यह तप्तमुद्रा और कही भी न ले ऐसी हमारी आज्ञा है। क्योंकि जहाँ श्री द्वारकाधीश एवं गोमतीजी है तप्तमुद्रा ग्रहण करने का अधिकार - विधान है। इसलीए जो इस विधान अनुसार तप्तमुद्रा ग्रहण करेगा, उसी को मैं अपना भक्त मानुंगा।

हे भक्तों ! हिन्दुधर्म के अन्य ग्रंथो में भी तप्तमुद्रा धारण करने का महिमा उल्लेखित है। ऋग्वेद संहिता, सामवेद के द्वितीय प्रपाठक, अथर्ववेद, ब्रह्मपुराण,प्रपन्नामृत एवं द्वारका माहात्म्य में विस्तारपूर्वक तप्तमुद्रा धारण करने का विधान है। जो भक्त महाफलप्रद तप्तमुद्रा धारण करेगा वह परमपद को प्राप्त होगा। जो भक्त द्वारकाधीश की यह शंख-चक्र-गदा और पद्म; यह लोह की अग्नितप्त मुद्रा अपने बाहू पर धारण करेगा, वह संसार सागर पार करेगा। जैसे सूर्योदय से अंधकार नष्ट हो जाता है उसी प्रकार वडताल में तप्तमुद्रा लेने से सब पाप नष्ट हो जाते है।

(४६) “प्रासादिक श्री हनुमानजी - श्री गणपतिजी”

रुप चोकी उगमणि विशाळ, तेथी उत्तरमां अेक काळ ।
हरिभक्त हीराजी शलाट, घडे हनुमान मूर्तिनो घाट ॥
जोवा आव्या त्यां धर्मदुलारो, कह्युं घाट घड्यो घणो सारो ।
प्रभु थैने प्रसन्न अपार, आप्यो पुष्प प्रसादीनो हार ॥
वळी ते मुरतीना हृदयमां, चांप्या चरण बे तेह समयमां ।

– श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१५, कडी.४७-४९

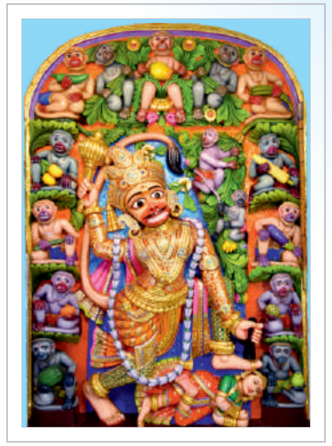

हे भक्तों ! श्रीहनुमानजी महाराज याने कि, रामभक्त। श्री हनुमानजी अर्थात् - धर्मकुल के कुलदेव। श्रीहनुमानजी अर्थात् पतिव्रताभाव से भक्ति करनेवाले भक्त। श्रीहनुमानजी अर्थात् ईष्टदेव श्रीरामजी की भावना रखकर सभी अवतारों की सेवा करने वाले भक्त। श्री हनुमानजी अर्थात् आदर्श सेवक का प्रत्यक्ष दृष्टांत। श्रीहनुमानजी अर्थात् साम,दाम,भेद और दंड के यथार्थवेत्ता - बुद्धिमता वरिष्ठ:।

हे भक्तों ! मंदिर की पूर्व दिशा “रूपचोकी” की उत्तर दिशामें श्रीहीराभाई सलाट श्री हनुमानजी की मूर्ति तराशते थे। उस मूर्ति का अवलोकन करने के लिए श्रीहरिजी पधारे। श्रीहनुमानजी की मूर्ति तराशनें का काम चल रहा था। उसे देखकर श्रीहरिजी अतिप्रसन्न हुए और स्वयं धारण किया हुआ पुष्प का हार हीराजी को दिया। तत्पश्चात् जब मूर्ति तैयार हुई उसके बाद मंदिर से पूर्वदिशा मे श्री हनुमानजी एवं गणपतिजी की प्रतिष्ठा की।

“मंदिरेथी ते पूर्व दिशानी, हती बारी जवा आववानी ।
तहा मारग मोटो मुकायो, कृष्णे तहां दरवाजो कराव्यो ॥
गणनाथ तथा हनुमान, निज हाथे थाप्या अेह स्थान ।”

– श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१६

हे भक्तों ! आज जहाँ पूर्व प्रवेशद्वार पर श्री हनुमानजी - गणपतिजी विराजमान है। वहाँ पहले सिर्फ एक खिडकी ही थी। अत: श्रीहरिने खिडकी हटाकर के वहाँ बडा प्रदेशद्वार करवाया। दोनो स्वरूप की प्रतिष्ठा स्वयं श्रीहरिने की है। अत: यह प्रासादिक देव स्वरूप का दर्शन करने जरुर जाना चाहिए। इन हनुमानजी का नाम श्रीहरिने ‘भीडभंजन’ रखा है।

(४७) "श्रीनारायण महोल"

"ध्याने धरवाने आत्म स्वरुप, अमे जग्या करावी अनूप ।
नाम राख्युं नारायण महोल, जाणी एकांत रुडो रचेल ॥
आप्यो रामप्रतापने अेह, ध्यान धरवाने कारण तेह ।"
– श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१४

हे भक्तों ! मंदिर के पूर्वदिशा की ओर उतरते ही गरुऽस्तंभ के पास की इमारत है वही है नारायणमहल। इस इमारत को श्रीहरिजीने ध्यान करने के लिए पसंद किया था किन्तु जब धर्मकुल का आगमन हुआ तो, वह मकान बडे भैया श्री रामप्रतापजी को आवास एवं ध्यान हेतु दे दिया। अतः आजकल यह "श्री रामप्रतापजी का बंगला" इस संज्ञा से जाना जाता है।

हे भक्तों ! इस महल के नीचे के कमरे में, जब मंदिर का काम चल रहा था तब रासमंडल की तराशी गई मूर्तिया रखी गई थी। श्रीहरिजीने उनको छडी लगाकर नृत्य करवाया था। यहां प्रथम मंजिल पर खडे होकर श्रीहरिजीने रंगोत्सव किया था।

"नारायण मोलमां उभा रही, रंग उडाड्यो श्रीजीअे तही ।
तेथी संत ने सत्संगी तणां, तन ने मन रंगाया घणा ॥"
– श्रीहरिलीलामृत क.८, वि.५३

हे भक्तों ! यह भूमि वडताल के पाटीदार "दलाभाई" की थी। वह श्रीहरिजी के प्रेमी भक्त थे। वह श्रीहरिजी का अति माहात्म्य समझते थे। उन्होने यह मकान श्रीहरि को भेंट किया था। बाद में श्रीहरिजीने अपनी सुविधा अनुसार रीनोवेशन कराया था।

"कृपानाथे कृपा करी त्यांय, कर्यो आरंभ कार्तिकमांय ।
नारायण मो'ल मांहि प्रभाते, लखे पत्रि प्रभु भलि भाते ॥"
– श्री हरिलीलामृत क.८, वि.४८

हे भक्तों ! श्रीहरिजीने कार्तिक मास में यहां शिक्षापत्री लेखन प्रारंभ किया और वसंतपंचमी तक अर्थात् तीन माह तक लेखन कार्य चला। फिर वह सब लेकर के श्रीहरिमंडप में पधारे और उस में से संशोधन करके २१२ श्लोक का लेखन किया।

(४८) श्रीहरिमंडप

"हरिमंडप हाल छे ज्यांय, एक कोठो असल हतो त्यांय ।
पासे रहीने ते कोठो पडाव्यो, हरिमंडप हरिये कराव्यो ॥
मोटा संत तथा हरिभक्त, घरे ध्यान विषयथी विरक्त ।
बीजा अक्षरधामना मुक्त, आवी ध्यान धरे प्रीतियुक्त ॥
अमे तेओने पुछियुं ज्यारे, बोल्या मुक्त मगन थई त्यारे ।
अति उत्तम अेह जग्या छे, एने अक्षरने एकता छे ॥
आंहि रुप तमारुं छे जेह, दिसे त्यां पण तेहनुं तेह ।
आवी आ स्थळे अेटला सारु, ध्यान तो अमे धरिये तमारुं ॥"
– श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१५, कडी.१४

हे भक्तों ! आज जहां श्रीहरिमंडप है वहां पहले एक मीनार थी। उस मीनार की जगह श्रीहरिमंडप का निर्माण हुआ है। इस मंडप मे श्रीहरि का निवास स्थान था अतः बडे बडे संत-भक्त विषयो से विरक्त होकर यहां ध्यान करते थे।

हे भक्तों ! श्रीहरि कहते है कि, "अक्षरधाम के मुक्त भी श्रीहरिमंडप में बैठकर ध्यान करते है; अतः हमने उनसे पुछा कि आप सब अक्षरधाम छोडकर यहां ध्यान करने क्यो आते है ! तब मुक्तोने कहां कि हे महाराज ! अक्षरधाम एवं श्रीहरिमंडप का ऐक्य है। यहां आपका मनुष्य स्वरूप है वह हम अक्षरधाम में भी देखते है। इसलिए हम सब हरिमंडप में ध्यान करने आते है।

हे भक्तों ! श्रीहरिजीने मंडप के निर्माण के बाद में, श्रीहरि जब जब वडताल पधारते थे, तब तब इसी मंडप में निवास करते थे। गढपुर की तरह यहां भी जब शुकानंद स्वामी से पत्र लिखवा रहे थे और दिया बुझ गया था, तब श्रीहरिने अपने दाहिने चरण के अंगुठे से तेज प्रगट करके पत्र लिखवाया था।

हे भक्तों ! श्रीहरिमंडप की सब से बडी विशेषता यह है कि स्वामिनारायण संप्रदाय की आचार – संहिता स्वरूप शिक्षापत्री ग्रंथ का संशोधन – लेखन यहां हुआ है। अतः संप्रदाय में हरिमंडप का एक विशिष्ट स्थान है। योगीराज श्री गोपाळानंद स्वामी भी लिखते है कि "अक्षरे धाम्नी सदृक्षे स्थितं च हरिमंडपे" अर्थात् यह हरिमंडप अक्षरधाम समान है।

वर्तमान में यहां श्री घनश्याम महाराज बिराजमान है और कई प्रासादिक वस्तुए भी है। इस मंडप का प्रथम जीर्णोद्धार प.पू.सद्.श्री कृष्णजीवनदासजी स्वामी (मेतपुरवाले) द्वारा हुआ था और द्वितीय जीर्णोद्धार मूल स्वरुप को यथावत रखकर के आ.कोठारी डॉ.संतवल्लभ स्वामी की निगरानी में संपन्न हुआ है।

(४९) शिक्षापत्री लेखन

"घणा जीवनां कल्याण काजे, विचार्यु मनमां महाराजे ।
शिक्षापत्री रचुं एक सारी, सर्व शास्त्रनो सार उद्धारी ॥
जेम पार पमाडवा हेतु, रचे सागर उपर सेतु ।
शिक्षापत्री प्रमाणे जो चाले, भवपार पामे कळिकाळे ॥"-
श्रीहरिलीलामृत क.८, वि.४८

हे भक्तों ! श्रीहरिजीने संवत् १८८२ के महासुद- ५ वसंतपंचमी ता.१२/२/१८८६ । सोमवार के दिन "हरिमंडप" मे बैठकर "शिक्षापत्री" का लेखन किया है । मात्र २१२ श्लोक की इस शिक्षापत्री में सभी शास्त्रो का सार है । अपने दिव्य ऐश्वर्य से श्रीहरिजीने 'गागर में सागर' समाया है और सर्वजीव हितावह इस शिक्षापत्री का प्रतिदिन पाठ करने का आदेश दिया है । "मेरी वाणी मेरा स्वरुप है । ऐसा समझना और उसका पालन करना; ऐसा भी स्पष्ट आदेश दिया है ।"

"शिक्षापत्री आलेखन का हेतु"

- अध्यात्म मार्ग के गूढ विषयों की सरल व्याख्या ।
- आध्यात्मिक, आर्थिक, शारीरिक एवं पारिवारिकक्षेत्र का मार्गदर्शन ।
- सामाजिक जीवन भी शांतमय एवं सुखमय बने ।
- धर्म,अर्थ, काम और आत्यंतिकी मुक्ति ।
- मानव में से मानवता का झरना सूख रहा था, उसे सजीवन करना ।
- संप्रदाय को अंधश्रद्धा एवं व्यसन से दूर रखना ।
- अंत: शत्रुओ का निवारण करना ।
- आश्रितों को प्रात:काल से सायंकाल तक का नित्यक्रम सिखाना ।

हे भक्तों ! वर्तमान में अधिकतर लोग, आचार,विचार, व्यवहार और आध्यात्मिक मार्ग से भटके हुए है । तब शिक्षापत्री उन राह से भटके हुए लोगो के लिए आईना है । दिशा सूचक कम्पास है ।

जैसे माता स्तनपान द्वारा बालक का पोषण करती है, वैसे ही शिक्षापत्री अपने आध्यात्मिक शरीर का पोषण करती है । इस शिक्षापत्री में कहाँ थुंकना (गला साफ करना) है और कहाँ नही वैसी बिलकुल सामान्य बात से लेकर; ब्रह्मरूप होकर के परब्रह्म की भक्ति करना जैसे सर्वोच्च आध्यात्मिक शिखर पर पहुँचने की बात कही गई है । अत: इसका प्रतिदिन अध्ययन करके उसके अनुसार आचरण करके श्रीहरि को प्रसन्न करना चाहिए ।

"छेली वात ए छे मानी लेजो रे, शिक्षापत्री प्रमाणे सहु रे'जो रे ।
शिक्षापत्री मांहि अमे रे'शुं रे, रही एमां सहुने सुख देशुं रे ॥"
- पु.प्रकाश: प्रकार : ४८

(५०) वडताल के बीस वचनामृत

"दरवाजाथी उत्तर मांय, लीलो लीमडो छे अेक त्यांय ।
सजी श्यामे सभा घणीवार, तहां आप्या छे परचा अपार ॥
तहां वातो करी वळी जेह, वचनामृत मांहि छे तेह ।"
- श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१६

हे भक्तों ! भगवान श्री स्वामिनारायण इस पृथ्वी पर अनंत आत्माओं के कल्याण के लिए प्रकट हुए और सर्वशास्त्र के साररूप 'वचनामृत' का उपदेश दिया । इस उपदेशामृत का सद्.श्री मुक्तानंद स्वामी, सद्.श्री गोपालानंद स्वामी,सद्.श्री नित्यानंद स्वामी, एवं सद्.श्री शुकानंद स्वामी; इन चार सद्गुरुओंने संपादित करके सत्संग को समर्पित किया । इस ग्रंथ का नाम "वचनामृत" है ।

हे भक्तों ! यह वचनामृत श्री पुरुषोत्तम नारायण की परावणी है । इस ग्रंथ में सब समझ सके ऐसी सरल शैली में सर्वशास्त्र के साररूप तत्व ज्ञान का उपदेश किया है । हे भक्तो ! याद रखना । वचनामृत से अधिक महत्त्व किसी और का समझना ही मोह है । अत: कितना भी महान शास्त्र कहलाता हो, परंतु वचनामृत से कभी भी उसकी तुलना नही करनी चाहिए । श्रीजी महाराजने गढडा मध्य के २८ वें वचनामृत में कहा है कि, "हमने जो यह बात कही है, वह कैसी है ? तो वेद शास्त्र पुराण आदि जो जो कल्याण के लिए पृथ्वी पर शब्दमात्र है, उन सबका हमने श्रवण किया है और सब का सार निकालकर यह बात कही है, वह परम रहस्य है और सार का भी सार है ।"

हे भक्तों ! स्वामिनारायण संप्रदाय के आश्रित संत-भक्तजन, नियमित इस ग्रंथ का वांचन-मनन-श्रवण या अभ्यास करते है । सभी लोग उसमे से स्वजीवन उपयोगी प्रेरणा प्राप्त करते है और यथाशक्ति श्रीहरि प्रबोधित मार्ग पर चलने का प्रयास करते है ।

हे भक्तों ! हम सब जानते है कि, अलग अलग समय में अलग अलग स्थान पर उपदिष्ट वचनामृतो का संग्रह है । अलग अलग मुमुक्षोओ ने; तत्त्वज्ञान एवं साधना विषयक किए प्रश्नो के उत्तर स्वरूप में अथवा उनके हितार्थ भी हर एक की आध्यात्मिक स्थिति अनुसार भिन्न भिन्न उपदेश दिया है । उन उपदेश के पावन स्थलों में एक है 'वडतालधाम' ।

हे भक्तों ! वडतालधाम के कुल २० वचनामृत है । उसमें से सात नीमवृक्ष के है । एक हवेली का है । तीन गोमतीजी के तट पर आम्रकुंज के है । चार मंदिर के आगे के मंच पर के है । दो वचनामृत मंदिर के अंदर के है । एक वचनामृत मंदिर के मंडप का है । एक वचनामृत पूर्व दिशा की ओर रूपचोकी का है और एक वचनामृत मंदिर के सन्मुख का है ।

(५१) आचार्य स्थापना

"हरिये दत्तपुत्रोने ज्यारे, बेय आचारजो कर्या त्यारे ।
स्थाप्या दक्षिणे श्रीरधुवीर, सामा अवधप्रसादजी धीर ॥
वेद मंत्र करी अभिषेक, वेंची आपीया देश प्रत्येक ।
पोतपोताना देशना जन, करे आचार्य केरुं पूजन ॥"

– श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१५

हे भक्तों ! विक्रम संवत् १८८२ में कार्तिकी समैये के लिए श्रीहरिजी वडताल पधारे थे। कार्तिक शुक्ल एकादशी के दिन सत्संग की विशाल सभा उपस्थित थी। उस सभा में बडे बडे सद्गुरु संत एवं धर्मकुल भी उपस्थित थे। उस वक्त उच्च सिंहासन पर बैठे श्रीहरिजी ने कहा कि सद्.श्री रामानंद स्वामीजीने धर्म की रक्षा के लिए मुझे यह धर्मपीठ सोंपी थी, मैने आज तक धर्म रक्षा के साथ साथ संप्रदाय का प्रचार प्रसार भी किया है। अब हम निवृत्ति चाहते है। अतः स्वामिनारायण संप्रदाय की धर्मधुरा हमारे भतीजे रधुवीरजी एवं अयोध्याप्रसादजी को प्रदान करता हुं। आज से उन दोनो को मेरे दत्तपुत्र के स्वरूप में स्वीकार करता हुं।

हे भक्तों ! श्रीहरिजीने मंदिर के पीछे दो पीठिका लगवाई और उस पर रधुवीरजी एवं अयोध्याप्रसादजी को बैठाया। वेदविधि से दोनो का पूजन किया-करवाया। इन दोनो में से श्री रधुवीरजी को वडताल देश (दक्षिणदेश) एवं अयोध्याप्रसादजी को अमदाबाद देश (उत्तरदेश) के आचार्य के रूप में प्रस्थापित किया। यह मंगल तिथि सं.१८८२ कार्तिक शुक्ल - एकादशी ता.२१/११/१८२५ थी।

हे भक्तों ! बाद में श्रीहरिजी ने वडतालदेश के आश्रितो से श्री रधुवीरजी महाराज का पूजन करवाया और अमदाबाद के आश्रितो से अयोध्याप्रसादजी का पूजन करवाया। उसी प्रकार से स्त्रीसभा में उनकी धर्मपत्निओं का पूजन; अपने अपने देशानुसार करवाया। तत्पश्चात् सभा में श्रीहरि ने आचार्य का महिमागान करते हुए कहां कि...

"धर्मवंशी आचारज मांय रे, सदा रह्यो छुं मारी इच्छाय रे।
अति धर्मवाळा जोई जन रे, रेवा मानी गयुं मारुं मन रे ॥
माटे एने पुजे हुं पूजाणो रे, ते तो जरुर जन मन जाणो रे।
एनुं जेणे कर्युं सनमान रे, तेणे मारुं कर्युं छे निदान रे ॥"

– पुरुषोत्तमप्रकाश : ४०

(५२) संतो की धर्मशाला

"कोठा पूरव पश्चिम केरा, बेय शोभित सरस घणेरा।
धर्मशाळा बे वच्चे चणावी, भाळी भक्तजनो मन भावी ॥
तहां संतनी पंक्तियो थाय, प्रभु पोते पीरसवा जाय ।
धन्य धन्य ते धर्मशाळाने, वा'लो विचर्या बहु एह स्थाने ॥
चारसेंय अने छन्नुं वार, फर्या त्यां प्रभु पंक्ति मोझार।"

– श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१६

हे भक्तों ! मंदिर की उत्तर दिशा में अर्थात् वर्तमान में मुख्यकोठारी श्री की ओफिस है उसके पीछे विशाल धर्मशाला है। इस भवन को संतो की धर्मशाला इसलिए कहां जाता है कि, श्रीहरिजी के समय में यहां पांचसो परमहंस निवास करते थे। यह धर्मशाला श्रीजी महाराज ने स्वयं बनवाई थी।

हे भक्तों ! जब जब भक्तजन संतो को भोजन भंडारा करवाते थे, तब तब श्रीहरिजी संत पंक्ति में परोसने आते थे। श्रीहरि संतपंक्ति मे पांच पांच बार परोसकर संतो के प्रति अपना लगाव व्यक्त करते थे। श्रीहरिजी ने यहां पर ४९६ बार संत पंक्ति में परोसकर अपनी प्रसन्नता व्यक्त की है।

हे भक्तों ! इस धर्मशाला में कई साल तक श्री गोपाळानंद स्वामी, श्री मंजुकेशानंद स्वामी, श्री स्वयंप्रकाशानंद स्वामी एवं श्री नित्यानंद स्वामी जैसे संत निवास करते थे। वर्तमान में यहां सद्गुरुओ के आसन है। यहां प्रतिदिन कई संत-भक्तजन दर्शन के लिए जाते है।

हे भक्तों ! श्री गोपाळानंद स्वामी अपने आसन (बैठक) पर प्रतिदिन वचनामृत की कथा करते थे और वचनामृत का रहस्य समझाते थे। इसी स्थान पर स्वामीजी नें सुरत के पारसी बच्चे को वाचा (वाणी) प्रदान की थी। गूंगे बालक को केले खिलाकर बोलने की शक्ति प्रदान की थी।

वर्तमानकाल में ई.स.२००६ से प्रतिदिन इस आसन पर "महापूजा" होती है। कई भजनानंदी संत-भक्तजन स्वामीजी के आसन पर बैठकर भजन-भक्ति करते है और यहां भक्तचिंतामणी के १४२ वे प्रकरण जिसमें श्रीगोपाळानंद स्वामी को दिए गए चमत्कारों का वर्णन है, वह प्रकरण भी प्रतिदिन बोला जाता है। ऐसी पवित्र संत धर्मशाला में संतो के आसन पर जरूर दर्शन के लिए जाना चाहिए। इन आसनो पर श्रीहरिजी की प्रासादिक वस्तुएं भी दर्शनीय है। अतः माहात्म्यपूर्वक इस स्थल का दर्शन करना चाहिए।

(५३) श्रीअक्षरभुवन

"देवालय थकी दक्षिण भाग, जोई श्रीहरिये सारी जाग्य ।
बोल्या श्रीमुखे श्रीहरि त्यांई, थाशे अक्षरभुवन आंई ॥
मारी प्रसादी वस्तु अपार, स्थपाशे एह भुवन मोझार ।
नर नारीयो दरशन करशे, मारी मूर्तिने अंतर धरशे ॥"
- श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१५

हे भक्तों ! एकबार श्रीहरिजी निजमंदिर में दर्शन करके; दक्षिण प्रवेशद्वार पर खडे होकर संतो भक्तो के प्रति कहने लगें । यह जो दक्षिण दिशा की भूमि है, वहा "अक्षरभूवन"बनेगा। उसमें मेरी प्रासादिक वस्तुए प्रस्थापीत होगी और अपार नर-नारीजन दर्शन कर के मेरे स्वरूप का सुख प्राप्त करेंगे।

हे भक्तों ! वडतालपीठ के तृतीय आचार्यश्री विहारीलालजी महाराज की आज्ञा से यह अक्षरभूवन का निर्माण हुआ है। उन्होने गांव गांव मे सत्संगी के घर घर जाकर श्रीहरिकी प्रासादिक वस्तुए एकत्रित की और यहां अक्षरभूवन में इस तरह प्रस्थापित की है कि हम सब आज भी उनका प्रत्यक्ष दर्शन कर रहे है।

हे भक्तों ! आचार्य श्री विहारीलालजी का कार्यकाल संवत् १८३५ से १८५५ तक रहा। वे २० साल तक आचार्य पद पर रहें। उन्होंने गोमती जी के तीन घाटों को पत्थर से बंधवाया। अक्षरभुवन एवं हरिमंडप के श्री घनश्याम महाराज की स्थापना भी उन्हीं के करकमलो से संपन्न हुई।

हे भक्तों ! अक्षरभुवन के प्रथम मझले पर जो श्री घनश्याम महाराज है वह प्रासादिक है, किन्तु प्रतिष्ठित नही थे। संतो के ध्यान का स्वरूप था। इस स्वरूप के मस्तक में शिखा की जगह श्रीहरि की शिखाके केश है ; किन्तु दिखाई नही देते है। इस स्वरूप का दर्शन सब लोगो को सानुकूल हो, यह सोचकर ही श्रीविहारीलालजी महाराजने इसे प्रथम माले पर प्रतिष्ठित किया है।

(५४)श्री रणछोडरायजी की प्रतिष्ठा

"पांडे गोपाळजी महाराज, रणछोडजीनी छबी काज ।
गया हता डुंगरपुर जेह, छबि लै आव्या वरताल तेह ॥
प्रतिमा मूकी वरतालमांय, गया पोते हता हरि त्यांय ।
दादाखाचरने दरबार, सभामां हता जग करतार ॥"
– श्रीहरिलीलामृत क.९, वि.१२

हे भक्तों ! श्रीहरिलीलामृत में आंठवे कलश के ४५ वे विश्राम में "श्री रणछोडरायजी" के वडताल आगमन का हेतु स्पष्ट किया गया है। वह में आपके समक्ष व्यक्त करता हुं।

स्वामी श्री सच्चिदानंदजी धर्मकूल के साथ द्वारकापुरी दर्शन हेतु गए थे। उसी समय उनके साथ द्वारकाधीश वहाँ से वडताल आए और श्रीहरिजीने "श्री नारायण भगवान "की मूर्ति में उनकी स्थापना की। तब श्री ईच्छारामजी के पुत्र गोपालजी को संकल्प हुआ कि, "द्वारकापुरी में श्री कृष्ण की मूर्ति श्यामवर्ण है और यह नारायण की मूर्ति श्वेत है, और नाम भी रणछोडराय नही है, श्री लक्ष्मीनारायण है। अत: दर्शनार्थी को यह श्री नारायण में रणछोडराय कैसे स्वीकृत होंगे। इसलिए श्रीहरिजी वडताल में श्री रणछोडरायजी की श्याम मूर्ति प्रतिष्ठित करे, तो अच्छा होगा।"

हे भक्तों ! गोपालजी के संकल्प को अंतर्यामी श्रीहरिने जानकर कहां कि, "जो श्रीकृष्ण है वही नारायण है और जो नारायण हे वही श्रीकृष्ण है; उस में कोई भेद नही है फिर भी आपकी संकल्पपूर्ति हम करेंगें।"

हे भक्तो ! श्रीहरिजी की आज्ञानुसार गोपालजी राजस्थान गए। वहां डुंगरपुर गाँव में श्री रणछोडरायजी की मूर्ति बनवाकर ले आए और श्रीहरिजी को प्रतिष्ठा के लिए प्रार्थना की, किन्तु श्रीहरि का स्वास्थ अच्छा नही था इसलिए उन्होंने युवाचार्य श्री रधुवीरजी को कहां, "मेरी तरफ से आप वडताल जाकर श्री रणछोडराय की प्रतिष्ठा एवं चैत्री समैया करो।"

हे भक्तों ! बाद में दोनो आचार्य वडताल पधारे। उस समय चैत्री समैया में हजारो भक्त एवं सैकडो संत आए थे। उसी महोत्सव में मध्य सिंहासन मे श्री लक्ष्मीनारायण देव के पास में संवत् १८८६ चैत्र कृष्ण-सप्तमी (ई.स.१८३०) के शुभ दिन श्यामवर्ण श्री रणछोडरायजी की प्रतिष्ठा की। आचार्य श्री रधुवीरजी महाराजने प्रतिष्ठा निराजन करके देव को साष्टांग प्रणाम किया। भक्तजन जय जयकार करने लगें।

"श्री रणछोडराय की जय... श्री द्वारकाधीश की जय... ।"

(५५) प्रासादिक नीम का वृक्ष

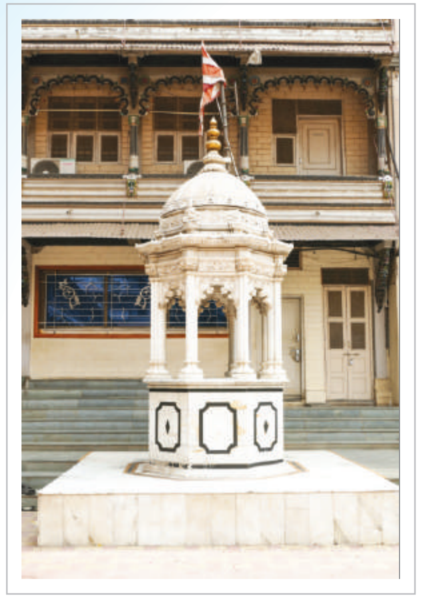

"दरवाजा उत्तरमांय, लीलो लींबडो छे एक त्यांय ।
सजी श्यामे सभा घणीवार, तहां आव्या छे परचा अपार ॥"
– श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१६

हे भक्तों ! आचार्य श्री रधुवीरजी महाराज सपरिवार मंदिर के सामने, उत्तरदिशा में हवेली में रहते थे। और धर्मकुल के अतिथी भी इसी हवेली में रहते। उसके पास मंदिर की पूर्व दिशा में प्रवेशद्वार से नजदीक एक नीम वृक्ष था। वहां अभी एक स्मारक बना हुआ है।

हे भक्तो ! उस नीम वृक्ष की छाया में श्रीहरिजी ने अनेकबार सभा करके वचनामृत पान कराया है। इस नीमवृक्ष की छाया के कुल सात वचनामृत है। वडताल का १०-११-१२-१३-१५-१६ एवं २०, इतने वचनामृत यहां के है।

हे भक्तों ! एकबार श्रीहरि इस नीमवृक्ष की छाया में सभा में बिराजमान थे, तब बडौदा सैन्य के साथ बापुभाई गार्दी श्रीहरि को पकडने के लिए आए। वह सयाजीराव के उपसेनापति थे। आकर कहें कि, "चलो स्वामिनारायण मैं आपको पकडने के लिए आया हुं, देखो मेरा कटशस्त्र, नहीं आओगे तो इससे वार कर दूंगा।"

हे भक्तों ! इस प्रकार कहकर के वह "भाला" गोल गोल घुमाने लगा। तब श्रीहरिजी हाथ में माला लेकर सुदर्शन चक्र की भांति घुमा कर बोले, "बापुभाई ! देखो यह मेरा ब्रह्मास्त्र है।" जब श्रीहरिने इस प्रकार कहां तब माला में से अपार तेज प्रकट हुआ, माला मे सें "स्वामिनारायण" मंत्रध्वनि सुनाई देने लगी और बापुभाई को श्रीहरिजी का चतुर्भुज स्वरूप में दर्शन हुआ और तुरंत उन्होने साष्टांग प्रणाम किया और सत्संग के नियम धारण करके अपने घर लौट कर आजीवन भगवद्भजन किया। इसके अलावा इसी स्थान पर बडौदा के शास्त्रीजी को भी चतुर्भुज रुप में दर्शन प्रदान किया है।

हे भक्तों ! जब श्रीहरि की माला में से तेजोपूंज प्रकट हुआ तब उनकी किरणे नीमवृक्ष पर छा गई और जिस शाखा पर विशेष तेज छाया था वह कडवाहट छोडकर मधुर हो गई थी। जब तक नीमवृक्ष रहा तब तक उसकी शाखा में नए पत्ते भी मधुर ही आते थे। इसलिए इस स्थली का बडे भाव से दर्शन करना चाहिए।

(५६) प्रासादिक बुरज

''पूर्व कोठा मांहि मुक्तानंद, रहेता उर धारी आनंद ।
घणीवार तहां घनश्याम, पोते विचर्या छे पूरणकाम ॥''
- श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१६

हे भक्तों ! प्रारंभ में तो मंदिर के चारो कोने में बुरज था। फिर जैसे जैसे निर्माण कार्य हुआ वैसे वैसे बुरज गिरता रहा। वर्तमान में जो एक बुरज है वह संत धर्मशाला की पूर्व दिशा में पोर्च के अंत मे है। इस बुरज का दर्शन गांव में ''तीन दरवाजा'' से होता है।

हे भक्तों ! जब वडताल में भक्तवृंद की भीड होती थी तब श्रीहरिजी इस बुरज पर चढकर, हजारो भक्तजनो को महोत्सव में दर्शनदान और ज्ञानोपदेश देते थे।

हे भक्तों ! आज मंदिर में प्रतिष्ठित श्री लक्ष्मीनारायणदेव की प्रतिमा जब बडौदा से बोचासण होकर वडताल लाई गई तब, इसी मीनार के कमरे मे रखी गई थी। उस मूर्ति पर वस्त्र आच्छादित करके सद्. श्री नित्यानंद स्वामी श्रीहरिजी के पास पहुंचे और चिंतित स्वर में कहां कि, ''श्री नारायण की मूर्ति में आयुध विपरित है।'' आप स्वयं आ कर के देख ले। यह सूनकर स्वयं श्रीहरिजी वहां पधारे और आच्छादनरूप वस्त्र उठाया तो चारो आयुध यथास्थान हो गए। यह चमत्कार इसी मीनार के कमरे में हुआ था और इसी कमरें में मेरे आदि सद्गुरु श्री मुक्तानंद स्वामी का निवास स्थान था।

हे भक्तों ! श्री मुक्तानंद स्वामी के स्वधाम गमन के बाद उनके शिष्य आधारानंद स्वामी उस कमरे मे रहते थे। इसी कमरें में स्वामीजी ने हिन्दुधर्म का सबसे विराट ग्रंथ 'श्रीहरिचरित्रामृत सागर' ग्रंथ हिन्दी में लिखा जिसे गिनीज बुक ने सबसे बडी पुस्तक होने का विश्व रेकोर्ड नवाजा है। ग्रंथ में ८८,१४५ छंद - दोहा - सोरठा-चोपाई है।

अतः बुरज एवं इस कमरें का दर्शन करने के लिए जरुर जाना चाहिए।

(५७) प्रदक्षिणा का स्मारक

''हवे स्थान बीजा तणी वात, कहुं ते तमे सांभळो भ्रात।
मंदिरे छे प्रदक्षिणा जेह, जाणो प्रभुपद अंकित अेह ॥
एक मास सुधी रूडी रीते, फर्या सो सो प्रदक्षिणा नित्ये।
निजदासने शिक्षण काम, करे एवी क्रिया घनश्याम ॥''
- श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१५

हे भक्तों ! श्री स्वामिनारायण भगवान स्वयं पुरुषोत्तम थे। उनको भजन-भक्ति करने की कोई जरुरत नही थी, किन्तु हमारी शिक्षार्थ वह सब कुछ किया करते थे। वह एक आदर्श भक्त की भांति रहते थे। प्रतिदिन पूजा करते। साष्टांग प्रणाम भी करते। गढपुर, वडताल में श्री गोपीनाथजी महाराज या वडताल में श्री लक्ष्मीनारायणदेव के मंदिर में प्रतिदिन जाते और साष्टांग प्रणाम भी करते ।

हे भक्तों ! चातुर्मास या श्रावण मासमें जब सभी भक्तवृंद विशेष नियम ग्रहण करते है। उसी तरह श्रीहरिजी भी नियम लिया करते। एक बार जब श्रीहरिजी वडताल में थे तब एक मास पर्यन्त नियम लिया था कि प्रतिदिन श्री लक्ष्मीनारायण देव की १००-१०० प्रदक्षिणा करना।

हे भक्तों ! वडताल मंदिर की १०० प्रदक्षिणा करने में कितना वक्त लगता है, कितना परिश्रम होता है वे तो जिसने किया हो वही जाने। जब नरनाटक कर रहे श्रीहरि सौ प्रदक्षिणा करके थक जाते तब मंदिर के पीछें जहां छत्र- स्मारक बना है वहां बैठते। इस लीला का उल्लेखन श्रीहरिलीलामृत एवं श्रीहरिस्मृति में है।

सद्. श्री निष्कुलानंद स्वामी लिखते है कि...

''वळी हरि मंदिरने फरता द्रगे दीठा छे. सो सो प्रदक्षिणा करता द्रगे दीठा छे.
जोता मूर्ति सुंदर सारी द्रगे दीठा छे, धातु पाषाणनी पट प्यारी द्रगे दीठा छे.
तेने दंडवत जो करता द्रगे दीठा छे, वळी सामुं जोई बहु रहेता द्रगे दीठा छे. ''
- हरिस्मृतिः चिंतामणि-४

हे भक्तों ! ऐसी परम पवित्र प्रदक्षिणा की छत्री-स्मारक पर मस्तक झुकाकर दर्शन करना चाहिए। और कभी कभी १००-१०० प्रदक्षिणा करके; श्रीहरि की यह लीला की स्मृति करके उनको प्रसन्न करना चाहिए।

(५८) प्रसादिक गद्दीवाला मंडप

हे भक्तों ! जब तक श्रीजी महाराज गढपुर में निवास करते तब तक आचार्यश्री रधुवीरजी महाराज भी परिवार के साथ वही रहते किन्तु श्रीहरि के स्वधाम गमन के बाद आचार्य श्री सपरिवार वडताल आ गए थे और मंदिर के सामने उत्तर दिशा मे स्थित हवेली में नित्य निवास किया करते थे। वर्तमान में हवेली के नीचे मंदिर का मुख्य कार्यालय बना है।

हे भक्तों ! इस हवेली के पश्चिमभाग को आज हम सब ''गद्दीवाला मंडप'' कहते है। क्योंकि वहां गादीपति रहते थे। आदि आचार्य श्री रधुवीरजी महाराज ने सर्वप्रथम एक बडी गद्दी बनवा कर उस स्थान लगवाई और उस पर श्रीहरिजी को बैठा कर पूजन किया और आरती उतारी थी। उस प्रसादीरूप गद्दी का रधुवीरजी महाराज प्रतिदिन दर्शन करते।

हे भक्तों ! तत्पश्चात जब मंदिर के पीछे आचार्य स्थापना हुई तब विधि संपन्न कर श्रीजी महाराज दोनों आचार्यश्री को गादीवाले मंडप में लाए और उस गद्दी पर दोनों को बैठकर कर पूजन कर आरती उतारी थी।

हे भक्तों ! उसके बाद श्रीहरिजी ने रधुवीरजी से हर रोज उसी गद्दी पर बैठने की आज्ञा दी थी। इसलिए वे प्रतिदिन दैनिक व्यवहार निपटाकर वहाँ बैठकर भजन भक्ति और पठन करते।

हे भक्तों ! आचार्यश्री गृहस्थ होते है और उनके साथ उनकी धर्मपत्नी रहती है जिन्हें ''गादीवाला'' भी कहते है। इस कारण से भी उस आचार्य परिवार के निवास स्थान होने की वजह से वह स्थान गादीवाला मंडप कहलाता है।

हे भक्तों ! वर्तमान में उस स्थान में प्रसादीभूत मूर्तियाँ, प्रसादी की वस्तुएँ और आचार्य श्री रधुवीरजी की चित्र प्रतिमा रखी गई है। साथ ही वह महाप्रसादी रूप गद्दी भी वहीं स्थापित है इसलिए उस गादी वाले मंडप में भाव और महिमा के साथ दर्शन के लिए जाना चाहिए जिससे हमें हरिकृष्ण महाराज की प्रसन्नता प्राप्त हो।

(५९) विशाल सभामंडप

''अभेसिंह सुणो धरी प्यार, सभा मंडप छे जेह ठार ।
तहां तो एक खेतर हतुं, संघने त्यां उतरवानुं थतुं ॥
जूनागढना ने वडोदरा केरा, उतर्या हता भक्त घणेरा ।
तेह जग्या विषे बहु वार, जम्या छे जई धर्मकुमार ॥
तेथी पृथ्वि प्रसादीनी थै छे, ध्यानीना ध्यानमां रही गैं छे।''
– श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१६

हे भक्तों ! वर्तमान में मंदिर के पीछे जो दो मंजिलवाला सभा मंडप है वह प्रासादिक नही है किन्तु वह भूमि जरुर प्रासादिक है। क्योंकि श्रीहरिजी के समय में वहाँ खेत था। महोत्सव के समय में जब ग्रामांतर से भक्तसंघ आते थे, तब वहाँ तंबु लगाकर रहते थे। विशेषत: सोरठ (जूनागढ प्रदेश) एवं कानम–वाकल (बडौदा) के भक्त इस खेत में रहते थे।

हे भक्तों ! महोत्सव में जब भक्तलोग वहाँ रहते तब महिला भक्त श्रीहरिजी को भोजन के लिए आमंत्रित करते थे। उनकी प्रेमभावना के वश होकर श्रीहरिजी वहाँ कईबार भोजन के लिए पधारे है। अत: वह भूमि प्रासादिक है। इसलिए भाव से दर्शन करना चाहिए।

हे भक्तों ! यह विशाल सभागृह सद्. श्री पवित्रानंद स्वामीने निर्माण किया है। संवत् – १९२५ में यह सभामंडप तैयार हुआ, तब तत्कालीन आचार्यश्री भगवतप्रसादजी महाराज के करकमलों से उद्घाटन हुआ था। उस वक्त संवत १९२५ तल्‌न १८६९ होगा में यह सभाकक्ष ८० से ८१ हजार रुपिया की लागत से तैयार हुआ था।

हे भक्तों ! श्रीहरि के स्वधाम गमन के ४९ उनपचास साल बाद यह मंडप का निर्माण हुआ था। इसकी चौडाई पूर्व –पश्चिम ५८ फीट एवं उत्तर – दक्षिण १४३ फीट है। इसका जीर्णोद्धार कार्य मेतपुरवाले शा. श्री कृष्णजीवनदासजी की स्मृति में दो बार किया गया है।

(६०) प्रसादिक नारायण बाग एवं कूप

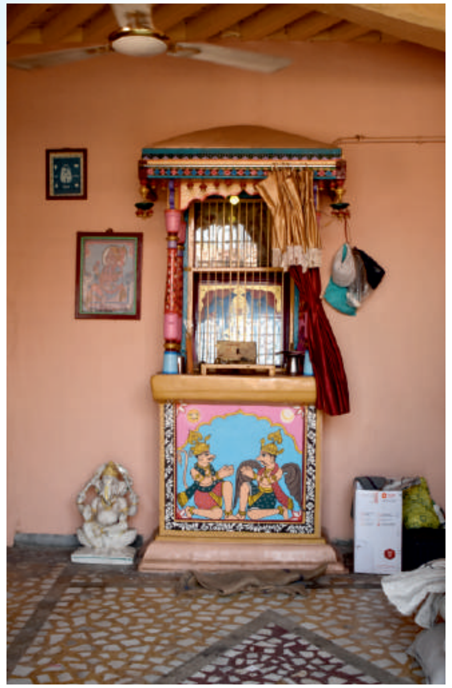

"मंदिरेथी जे उत्तर भाग, बन्यो ज्यां छे नारायण बाग ।
जुओ जग्या तहां सुधी जे छे, हरिचरणथी अंकित ए छे ॥
गाम पटेल आदिके ज्यारे, आपी ते बागनी भूमि त्यारे ।
श्रीजीये कह्युं दादागुरुने, करि बाग शोभावो आ भूने ॥
प्रभुतानंदजी संत जेह, कहेवाता दादागुरु तेह ।
कुवो खोदाव्यो श्रीजीये त्यांय, नाह्या ते जळथी हरिराय ॥
स्नाननुं जळ ते बधुं राख्युं, दादागुरुये ते कूवामां नांख्युं ।
तहां बाग बनावियो सारो, देखी बोलिया धर्मदुलारो ॥
आनुं नाम नारायण बाग, नारायण कूप जाणो आ जाग ।
बाग ते स्थळमां मन भाव्यो, प्रभुये पासे रहिने कराव्यो ॥"

– श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१९

हे भक्तों ! मंदिर की उत्तर दिशा में गोमतीजी के तट पर बडी "गौशाला" है। पहले यह जगह "नारायणबाग" नाम से प्रसिद्ध थी। जब गांव के पाटीदार भक्तजनोने यह भूमि भेंट की तब श्रीहरिजीने प्रभूतानंद स्वामी को बुलाकर कहाँ– "इस जमीन में उद्यान बाग बनाए। उद्यान के पौंधे– और वृक्ष के लिए हम एक कुआं खुदवाए गें।"

हे भक्तों ! वहां श्रीहरिजीने स्वयं अपनी निगरानी में कुंआ खुदवाया। उसमें जैसे पानी आया वैसे ही सर्वप्रथम स्वामी प्रभूतानंदजीने श्रीहरिको स्नान करवाया और वह जल कुए में डालकर कुआ प्रासादिक बनाया था।

हे भक्तों ! कुए में पानी प्राप्त होने से स्वामीजी ने उस जगह पर अनेक फल–फूल के पौंधे बोए। कालांतर में जब वृक्ष पर फल आने लगे, तब श्रीहरिजी वह फल ग्रहण करते।

इसी नारायणबाग में एक छोटा सा कमरा था। उसमें स्वामीजी रहते थे। वहां नारायणजी सुथार नें कमरे की दिवाल पर मूर्ति बनाई थी। वह आजभी मोजूद है। श्रीहरिजी जहां बैठकर खाना खाते थे वहां स्मारक बना है और जहां नारायणबाग था वहां आज मंदिर की भव्य गौशाला बनी है। उसमे २५० से अधिक गिर नस्ल की गाय है। वर्तमान में गौशाला एवं खेत की सेवा मेरे गुरुबंधु मुनिवल्लभ स्वामीजी देख रहे है। यह स्थान प्रासादिक है। कुंआ भी है अत: दर्शनार्थ जाना चाहिए।

(६१) शमी पूजन

"आव्यो दसरा तणो दिन ज्यारे, शमी पूजवा नीसर्या त्यारे ॥
भलुं धारु तळाव जे ठाम, आज छे जेनुं गोमती नाम ।
हाल छत्री करावी छे ज्यांय, श्रीजी ने संत जै बेठा त्यांय ॥
खूब काठीये खेलाव्यां घोडां, कोई एकलां कोई सजोडा ।
जेम वीजळी आवे ने जाय, घोडां दोडतां एम देखाय ॥
हतो खीजडो उत्तर मांय, पूजवाने प्रभु गया त्यांय ।
गोर डाया मेता वनमाळी, तेणे पूजा करावी रुपाळी ॥"

– श्रीहरिलीलामृत क.७, वि.४८

हे भक्तों ! अश्विन शुक्ल १० मी याने कि "विजयादशमी"। इस दिन भगवानश्री राम ने रावण का वध किया था और पांडव जब विराट नगर में एक वर्ष गुप्त में रहे थे, तब अपने शस्त्र शमीवृक्ष पर रखे थे और विजयादशमी के दिन अपने शस्त्र शमी से उतार कर शमी का पूजन करके आभार व्यक्त किया था और शस्त्रों का भी पूजन किया था।

हे भक्तों ! पांच हजार साल से क्षत्रियों में यह परंपरा चली आ रही है कि, विजयादशमी के दिन शस्त्र पूजा एवं अश्वस्पर्धा करते है। भगवान श्रीहरि काठी क्षत्रियों के साथ रहते थे अत: उनकी प्रसन्नता एवं परंपरा जीवंत रखने के लिए श्रीहरिजी प्रतिवर्ष शमीपूजन करते थे।

हे भक्तों ! विजयादशमी के अवसर पर श्रीहरि जब वडताल में होते थे, तब गोमतीजी के तट पर स्थित शमीवृक्ष के पूजन के लिए आते थे। इसी नियमानुसार मंदिर से ढोल त्रांसा आदि वार्जीत्रो के साथ नगरयात्रा के रूप में गोमतीजी के तटपर आए और वहां शमी का पूजन किया। विप्रो ने विधिवत् श्रीहरि से पूजन करवाया। उस वक्त काठीभक्तोनें घोडे खिलाए और श्रीहरिजी को प्रसन्न किया। इस जगह पर आज स्मारक है। वहां जाकर के श्रीहरिजी की इस लीला की स्मृति के साथ दर्शन करना चाहिए।

(६२) गोमतीजी के मध्यमें (छत्री) स्मारक

"मध्य भाग तलावनो ज्यांय, झाड कोठी तणुं हतुं त्यांय ।
तहां जै बेसता घनश्याम, जोता खोद्यानुं चाले ते काम ॥
तेह जग्यानुं माहात्म्य जाणी, अति अंतरमां मुद आणी ।
भगवत्प्रसादे भली रीते, एक ओटो कराव्यो छे प्रीते ॥"

– श्रीहरिलीलामृत क.१, वि.१९

हे भक्तों ! आज गोमतीजी के मध्यमें एक बडा स्मारक (छत्री) है, वहाँ श्री नीलकंठवर्णी का दर्शनीय स्वरुप प्रस्थापित है। आज-कल वहाँ तक पहुँचने के लिए सेतु-ब्रीज बना हुआ है। यह सात आठ साल पहले ही हुआ है। इससे पहले मध्य में एक बडा चबूतरा था और तैरने वाले संत-भक्त वहां जाकर के विश्राम करते थे। आईए, मैं आपको उसका इतिहास बताता हुं।

हे भक्तों ! जब गोमतीजी कि खुदाई का काम चलता था तब भगवान श्री स्वामिनारायण स्वयं बीच में जाते थे। वहाँ बैठते थे और चारो ओर सेवारत भक्तजनों की सेवा देखकर प्रसन्न होते थे। वहाँ एक कवीट (कोठा) का वृक्ष था। उनकी छाँया में बैठकर श्रीहरिजी सेवारत भक्तो का कार्य निर्देशन भी करते थे।

यह गोमतीजी अतिपवित्र तीर्थ है, इसकी सेवा में संत-भक्त के साथ साथ देवगण भी आते थे। दिन में भक्तलोग काम करतें और रात में देवता। परिणामतः अल्प समय में छोटा सा धारु तालाब विशाल गोमती सरोवर में परिवर्तित हो गया। आजकल महोत्सव में हजारो नरनारी स्नान करकें पवित्र होते है।

आज यहाँ सेतु के साथ छत्री – स्मारक बना है। वह परमपवित्र प्रसादीक स्थान है। ऐसा माहात्म्य समझ करके द्वितीय आचार्यश्री भगवत्प्रसादजी महाराजनें वहाँ चबूतरा करवाया था।

कालांतर मे कुछ साल पहले वडताल मंदिर के तत्कालिन चेरमेनश्री सद्.शा.श्री घनश्यामप्रकाशदासजी स्वामी – लोयाधाम (मेरे गुरुजी) एवं तत्कालीन मुख्यकोठारीश्री सद्.शा.श्री नीलकंठचरणदासजी स्वामी की प्रेरणा से उनके शिष्य को.श्री देवप्रकाशदासजी स्वामीने गोमती का जीर्णोद्धार करके, चबूतरे की जगह स्मारक छत्री का निर्माण कराया है और बीच तक जाने के लिए सेतु-पुलिया भी बनवाई है। आजकल नर-नारी वहाँ तक पैदल पहूच सकते है। अतः वहाँ भी जरूर दर्शनार्थ जाना चाहिए।

(६३) गोमतीजी के तट के वचनामृत

हे भक्तों ! वचनामृत याने कि; भगवान श्री स्वामिनारायण के करूणामय संकल्प से प्रवाहित हुआ ज्ञानप्रवाह । जैसे समुद्र मंथन के वक्त साररूप अमृत प्राप्त हुआ था, वैसे ही यह वचनामृत सभी शास्त्रों के दोहन से प्राप्त नवनीत है। सर्व शास्त्रार्क स्वरूप यह ग्रंथ; कभी भी न मुरझाने वालें सुगंधित पुष्प है।

हे भक्तों ! गुरु – शिष्य के निर्दोष-निखालस संवाद सेतु से प्राप्त उपनिषद जैसी प्रश्नोत्तर शैली इस वचनामृत की विशेषता है। इस ग्रंथ में मुमुक्षु की पात्रता अनुसार काम – क्रोधादि अंतःशत्रु के निवारण के सरल एवं सटीक उपाय है एवं धर्म-ज्ञान-वैराग्य एवं भक्तिस्वरूप मंगल चतुष्टय की सिद्धि के उपायों का वर्णन भी है। अध्यात्म के मार्ग में पग पग आनेवाले प्रत्येक प्रश्नो के समाधान की जडीबुट्टी स्वरूप यह वचनामृत है। मुमुक्षु से मुक्तस्थिति प्राप्त करा नें वाला ग्रंथ है वचनामृत। पतित को पावन करनेवाला ग्रंथ है वचनामृत। जीव को ब्रह्मस्थिति प्रदान करने वाला ग्रंथ है वचनामृत। अतः इस ग्रंथ का अभ्यास करके, समझण दृढ करकें श्रीहरिजी की स्वरूपनिष्ठा परिपक्व करना चाहिए।

हे भक्तों ! वचनामृत में वडताल के २० में से ३ तीन वचनामृत गोमतीजी के तट पर आम्रकुंज के है। प्रथम वचनामृत यहीं का है। यह निर्विकल्प समाधी का है। इसमें दो बात मुख्य है। (१) अष्टांगयोग लभ्य समाधी से श्रेष्ठ है निर्विकल्प निश्चय स्वरूप समाधी। (२) भगवद् भक्त को मन से जरूर बैर करना चहिए। जिससे उसका जरूर भला होगा। द्वितीय वचनामृत भी आम्रकुंज का ही है, इसका विषय- चार शास्त्र से भगवत ज्ञान प्राप्ति का है। पांचवा वचनामृत भी आम्र कुंज का है। इसका विषय भगवान् को अमायिक समझना है एवं भगवान तथा उनके पवित्र संत भक्त की सेवा का समान फल है, ऐसा वचनामृत में उल्लेख है।

ऐसे सुंदर वचनामृत गोमतीजी के तटपर आम्रकुंज में श्रीहरिने कहें है। यहाँ पर भी सुंदर कलात्मक छत्री स्मारक बना है। अतः वहाँ जा कर दर्शन करके, इन वचनामृतों का वांचन वांचन – स्मरण करना चाहिए।

(६४) केदारेश्वर महादेवजी

हे भक्तों ! भगवान श्री स्वामिनारायण ने अनेक मंदिरो में “ महादेवजी” के दर्शन किए है। सत्संग विचरण मे जहाँ जहाँ पधारे, वहाँ वहाँ यदि मंदिर है तो जरूर दर्शन किए है। ऐसे देवस्थानो की गिनती की जायें तो सबसे ज्यादा महादेवजी के मंदिर है। अनेक गाँव एवं तीर्थस्थानो में श्रीहरिजी सबसे ज्यादा महादेवजी के मंदिर मे दर्शन हेतु गये है। उसका कारण बताते हुए श्रीहरिने लोया के प्रथम वचनामृत में ही कहाँ है कि शिवजी तो त्यागी है और भगवान् के बडे भक्त है। इसलिए हम शिवजी को मानते है।

हे भक्तों ! इसलिए श्रीहरिजी जब वडताल आए थे तब ज्ञानबाग के सामने, तालाब के तट पर जो केदारेश्वर महादेवजी का मंदिर है, वहाँ पधारे थे और महादेवजी का पूजन किया है। इसलिए संप्रदाय में ऐसी मान्यता है कि यह दर्शन करनें से हिमालयस्थ “केदारनाथजी” के दर्शनतुल्य फल प्राप्त होता है। अतः यहाँ दर्शन के लिए जरूर जाना चाहिए।

(६५) गोमतजी के दक्षिणतट पर छत्र (स्मारक)

हे भक्तों ! ऐसी कोई नदी नही है जिसमें श्रीहरिने वन-विचरण के वक्त स्नान न किया हो। गुजरात मे नित्य निवास के बाद भी; सत्संग विचरण में जहाँ जहाँ जाते, वहाँ वहाँ नदी तालाब देखकर सवारी रोक देते और स्नान करते और यदी समय की सानुकूलता हो तो सामान्य मनुष्य की तरह डुबकी दाव जैसी जलक्रीडा भी करते।

हे भक्तों ! श्रीहरिजी जो स्नानक्रीडा करते, उसके पीछे आध्यात्मिक रहस्य छुपा रहता था। श्रीहरि स्नान करके उस नदी-तालाब आदि को तीर्थत्त्व प्रदान करते जिससे भविष्य में उस जल में स्नान करनेवालों के जीवन अध्यात्मलक्षी हो जाते।

हे भक्तों ! गोमतीजी के दक्षिण तट पर एक कदम्ब का वृक्ष था। उस पर चढकर श्रीहरिजी गोमतीजी में कूद कर जलक्रीडा करते । वडतालधाम में स्थित “गोमतीजी”को विशेष तीर्थत्त्व प्रदान करने के लिए श्रीहरिजी ने अनेक बार यहाँ स्नान किया है। दीर्घकाल तक जलक्रीडा की है। श्रीहरि जलक्रीडा के बाद जहाँ आराम करते , वहा स्मारक बनवाकर चरणारविंद प्रस्थापित किए है। अतः जब गोमतीजी पर स्नानार्थ जाए तो वह स्थल पर जरूर दर्शन करना।

(६६) गोमतीजी के तट पर ओटा

हे भक्तों ! गोमतीजी के उत्तर तट पर एक आम का पेड था। वहाँ पर कईबार श्रीहरिजी सभा करके विराजमान होते थे। जब गोमतीजी को गहरा करने का काम चल रहा था, तब श्रीहरि इस पेड के नीचे, सेवकों को आलिंगन कर प्रसन्नता प्रसाद दिया करते थे।

श्रीहरिजी ने इसी आम के पेड की छाया में कईबार भोजन भी किया है। एवं संतो भक्तो के साथ प्रश्नोत्तरी भी की है। ऐसी अनेकानेक लीला की चिर स्मृति के लिए इस जगह पर एक स्मारक बनवाकर श्रीहरि के ''चरणारविंद'' प्रस्थापित किए है जहां दर्शनार्थ जरूर जाना चाहिए।

(६७) रघुबीर बाग (वाडी)

हे भक्तों ! गोमतीजी की पश्चिम की ओर ''रधुवीर बाग '' है, जो आजकल ''रधुवीर वाडी'' के नाम सें प्रसिद्ध है। वहां जोबनपगी इत्यादि के खेत थे। उन सभी खेतों में विचरण करके श्रीहरिने पावन किया है। बाग से पश्चिम में एक कूप है, कूप से पूर्व में एक बडा आम का पेड था। वहां वरीयालीबाई ने हिन्दुस्तानी रसोई बनाकर के श्रीहरिजी को भोजन कराया था।

हे भक्तों ! रधुवीर बाग में एक ''इमली'' का वृक्ष था। वहां अनेकबार रसोई करके, जेतलपुरवाले गंगामाई ने श्रीहरिजी को भोजन कराया है। एवं श्रीहरिजीने उस वृक्ष के नीचें बैठकर ज्ञानोपदेश दिया है। इस प्रासादिक स्थल पर एक स्मारक बना है जिसके दर्शन अवश्य करने चाहिए।

(६८) बंदरो के हाथ मे माला

"ना'वा धारु सरे जवा काजे, उर इच्छा करी महाराजे ।
अति सारी सजी असवारी, चाल्या धारु सरे गिरधारी ॥
करी स्नान दीधां बहु दान, सभा पाळे सजी भगवान ।
जहां बेठक छे भली आज, बिराज्या तहां श्रीमहाराज ॥
आव्यो वांदरो एक ए टाणे, ठेकी झाडे चड्यो ते ठेकाणे ।
काठियो तेनुं जोइ वदन, बोलवा लाग्या मर्म वचन ॥
रामचंद्र पासे हनुमान, नळ नील हशे आ समान ।
पण राक्षस साथे ते वार, लड्या हाथे धरी हथियार ॥"

– श्रीहरिलीलामृत क.८, वि.५

हे भक्तों ! यह प्रसंग तब का है जब द्वारिका से गोमतीजी का वडताल आगमन नही हुआ था। आज का गोमती तालाब तब "धारु" तालाब था। एक दिन श्रीहरि संत भक्तगण के साथ धारु तालाब में स्नान के लिए पधारे। श्रीहरिजी ने स्नान के बाद गरीबों को दान दिया और बाद में तालाब के किनारे स्थित वृक्ष के नीचे बैठकर ज्ञानवार्ता करने लगे। उस वक्त एक बंदर आया और छलांग लगाकर वृक्ष पर चला गया। उसे देखकर काठी मार्मिक वचन कहने लगे। श्री रामजी के साथ युद्ध में गए बंदर ऐसे ही होंगे ? हनुमानजी, नल, नील और सुग्रीव विगेरे ने बडे बडे राक्षसों के साथ लडाई की थी। वह कैसे समझा जाय!।

हे भक्तों! उस समय श्रीहरि नें अंगुली निर्देश करके बंदर को बुलाया। बंदर तुरंत श्रीहरि के समीप आया। श्रीहरिनें उसके हाथ में माला दी।

"माळा आपी तेने कृपानाथे, लई फेरववा लाग्यो हाथे;
वळी राम कथानी चोपाई, बोलवा लाग्यो ते गाई गाई."

फिर काठी भक्त के कथनानुसार श्रीहरि नें बंदर पर द्रष्टि की। तुरंत बंदर का शरीर पर्वत जैसा हो गया और हाथ में बडा पर्वत उठाकर आकाश मे अदृश्य हो गया। वर्तमान में उस स्थान पर बडा स्मारक बना है, जिसके दर्शन के लिए अवश्य जाना चाहिए।

(६९) प्रसादी की ब्राह्मी वनस्पति

हे भक्तों ! योगीराज श्री गोपाळानंद स्वामीने जैसे सारंगपुर में श्री हनुमानजी महाराज की प्रतिष्ठा की है वैसे ही "रधुवीर वाडी " में "ब्राह्मी" नामक वनस्पति उगाकर दी थी। किसी भी व्यक्ति को मानसिक बिमारी होती तो वह मंदिर में यथाशक्ति दक्षिणा का पर्चा लेकर के रधुवीर वाडी आता । वहाँ से ब्राह्मी वनस्पति लेकर के दर्दी को खिलाई जाती, तब स्वामीजी के आशीर्वाद से मानसिक बीमारी ठीक हो जाती। ऐसा सामर्थ्य स्वामीजीनें ब्राह्मी मे प्रस्थापीत किया था, किन्तु सखेद लिखना पडता है कि वर्तमान में वहां ब्राह्मी नहीं है।

(७०) आचार्यश्री स्मृति मंदिर

हे भक्तों ! वर्तमान में गौशाला के सामने ही आचार्यश्री स्मृति मंदिर है। वहां सर्वप्रथम आचार्य श्री रधुवीरजी महाराज के पार्थिव शरीर का अंतिम संस्कार हुआ था। उस स्मृति में वहां मंदिर जैसा स्मारक है। यह वह स्थान है जहां परंपरा सें सभी आचार्यो का अग्नि संस्कार होता है।

(७१) उपसंहार

"हरिवर वरतालमां वसीने, निजजनना मनमां बहु ठसीने;
अद्‌भूत सुख सर्वनेय आप्यां, अज हर आदि थकी न जाय माप्यां.
परम पुनित पृथ्वी पृथ्विपाळ, पुर वरताल तणी घणी रसाळ;
पुनित सुपुरी सात जे गणाय, पण वरताल समान ते न थाय.
गढपुर वरताल धाम केवां, शरीर विषे शुभ नेत्र जोड जेवां;
नजर करी जुवो विराट मांहि, अवर न एह समान धाम क्यांही.
प्रभुपद परच्या विनानुं क्यांई, नथी घर तो वरताल गाममांई;
पण घर अति मुख्य ते गणाव्यां, स्मृति अनुसार सनेहथी सुणाव्यां."

— श्रीहरिलीलामृत

हे संत-भक्तगण ! ऐसा कोई नहीं है जो यथार्त रूप से वडतालधाम की महिमा और इतिहास लिख सके तो फिर मैं कैसे लिख सकता हूँ। तथापि मैंने अपनी मति अनुसार; जैसा समझ में आया, वैसा लिखा है। भगवद गुणानुवाद किया है। इसलिए इस ग्रंथ को पढकर सब संतभक्तगण मुझ पर प्रसन्न रहना। इसी प्रार्थना के साथ यह वाणी स्वरूप पुष्प श्रीहरिकृष्ण महाराज एवं श्री लक्ष्मीनारायण देव के चरणो में समर्पित करके लेखन कार्य समाप्त करता हूँ।

लि. स्वामी ब्रह्मस्वरुपदास - कंडारी गुरुकुल-वडतालधाम

गुरु : सद्‌गुरु शास्त्री श्री घनश्यामप्रकाशदासजी स्वामी - मुख्यकोठारीश्री वडताल संस्थान

लेखन प्रारंभ :- वि.सं.२०७५ श्रावण शुक्ल - ५

लेखन समाप्त :- वि.सं. २०७५ श्रावण शुक्ल - ११

ता. ५/८/२०१९ से ११/८/२०१९

संदर्भ ग्रंथसूचि

१. वचनामृत..... श्रीजी महाराजकी परावाणी
२. भक्त चिंतामणि..... सद्‌गुरु निष्कुलानंद स्वामी
३. सत्संगिजीवन..... सद्‌गुरु शतानंद स्वामी
४. निष्कुलानंद काव्य..... सद्‌गुरु निष्कुलानंद स्वामी
५. अद्‌भूतानंद स्वामीनी वातो..... सद्‌गुरु अद्‌भूतानंद स्वामी
६. श्रीहरिलीलाकल्पतरु..... सद्‌गुरु अचिंत्यानंद ब्रह्मचारीजी
७. श्रीहरिलीलामृत..... आचार्य श्री विहारीलालजी महाराज
८. भक्त-आख्यान..... सद्‌गुरु ज्ञानजीवनदासजी स्वामी
९. वडताल माहात्म्य..... शास्त्री केशवप्रसाददासजी स्वामी
१०. वडतालधाम संदर्भ..... प्रोफेसर हरेन्द्र भट्ट

ब्रह्मस्वरुप स्वामी के द्वारा लिखे हुए पुस्तकोकी सूचि

क्रम	पुस्तक के नाम		क्रम	पुस्तक के नाम	
(१)	प्रगटना गुणगान	ई.स. १९९४	(११)	कीधो यज्ञ डभाणमां	ई.स. २०१०
(२)	ज्ञानसरिता	ई.स. १९९५	(१२)	मांगरोलमां श्रीजी महाराज	ई.स. २०११
(३)	सत्संगिजीवन सागरमंथन	ई.स. १९९७	(१३)	आत्मबोध	ई.स. २०१२
(४)	मोहनजीने मलवाने	ई.स. १९९७	(१४)	लोजधामनी लीला	ई.स. २०१३
(५)	जीवन-यात्रा	ई.स. २००४	(१५)	कृपा-मुक्ति	ई.स. २०१४
(६)	मानवताना दीवडा	ई.स. २००४	(१६)	मुक्तिना उपायो	ई.स. २०१४
(७)	वाणी विवेक	ई.स. २००४	(१७)	लीला लोयाधामनी	ई.स. २०१६
(८)	जीवन एक स्नेह झरणुं	ई.स. २००४	(१८)	धरगामनो महिमा	ई.स. २०१९
(९)	अमानवीय क्रूरता	ई.स. २००४	(१९)	आदर्श जीवन प्रसंगो	ई.स. २०१९
(१०)	शीलवंता संतो सांभलजो	ई.स. २००९	(२०)	आपणुं वडतालधाम	ई.स. २०१९

१. मुख्य मंदिर
A सभामंडप
B हरिमंडप
C अक्षर भुवन
D रामप्रतापभाई के बंगलो
E श्री गणपति
F श्री हनुमानजी
G ज्ञानकुप
H भोजनालय

२. नरेन्द्र भुवन
३. तीन द्वार
४. बसस्टेन्ड
५. स्मृति मंदिर
६. गोमती तालाब
७. सभा की छत्री
८. समी पुंजनकी छत्री
९. रघुविरवाडी

१०. इमली का ओटा
११. गंगाजलीया कुआँ
१२. वडेवमाताजी
१३. जोबनपगी की मेडी
१४. घेला हनुमानजी
१५. केदारेश्वर महादेव
१६. ज्ञानबाग
१७. सोनार कुई

१८. गोपी तालाब
१९. खोडीयारमाताजी
२०. टाडण तालाब
२१. धना तालाब
२२. रेल्वेस्टेशन
२३. सुंदरपगी का कुआँ

भगवान श्रीस्वामिनारायण के प्रसादीभूत दर्शनीय स्थल 'मंदिर परिसर'

मुख्य मंदिर

हरिमंडप (शिक्षापत्री भूवन)

रामप्रतापभाई का बंगला

नंदसंतो की धर्मशाला

आचार्य स्थापना छत्री

गादीवाला मेडा

वचनामृत छत्री

सभामंडप

अक्षरभवन

श्री गणपतिजी श्री हनुमानजी

ज्ञानकुप

बुरज

वड़तालधाम भूमि परितः भगवान श्रीस्वामिनारायण के प्रसादी भूत स्थल

ज्ञानबाग

गोमती तलाब

सभा की छत्री (गोमतीजी)

समी पूजन की छत्री (गोमतीजी)

नारायण कुप नारायण बाग

गंगा मा का ओरडा (गौशाला के पास)

वचनामृत छत्री

गंगाजलीया कुआँ

वडेउ माताजी

जोबनपगीनी मेडी

घेला हनुमानजी

केदारेश्वर महादेव

सोनार कुई

गोपी तलावडी

खोडीयार माताजी

टाडण तलाब

धना तलाब

सुंदरपगी का कूवाँ

श्री लक्ष्मीनारायण देव
वडताल धाम
द्विशताब्दी २००
सवत १८८१ से २०८१
महोत्सव
९ से १५ नवे.- २०२४

-: પ્રકાશક :-

श्री वड़ताल मेनेजींग ट्रस्टी बोर्ड की ओर से
मुख्य कोठारीश्री डो. शास्त्री संतवल्लभदास (Ph.D., D.Litt)
श्रीस्वामिनारायण मन्दिर, संस्थान-वड़ताल
पीन : ३८७३७५ (गुजरात)

(0268) 2589728, 2589776 vadtaldhamvikas@gmail.com www.vadtalmandir.org